



वैशाली

जून 2025, अंक-30



राजभाषा विभाग, पूर्व मध्य रेल, हाजीपुर

पूर्व मध्य रेल की गतिविधियाँ





छत्रसाल सिंह
महाप्रबंधक
Chhatrasal Singh
General Manager



सत्यमेव जयते

पूर्व मध्य रेल
हाजीपुर – 844101
East Central Railway
Hajipur- 844101
Phone : + 91-06224-274728
Fax - 271513, 274738
E-mail : gm@ecr.railnet.gov.in



संदेश

भारतीय रेल जिस प्रकार राष्ट्र की जीवन रेखा है उसी प्रकार हिंदी करोड़ों भारतीयों की वाणी है। संपूर्ण देश को एक-सूत्र में पिरोये रखने में दोनों की महत्वपूर्ण भूमिका है। रेलों से प्रकाशित हिंदी पत्रिकाएँ एक ओर अधिकारियों/कर्मचारियों के मध्य सृजनात्मक वातावरण का निर्माण करती हैं, तो दूसरी ओर भाषा एवं साहित्य के क्षेत्र में भी विनम्र सहयोग करती हैं।

मुझे खुशी है कि राजभाषा विभाग 'वैशाली' पत्रिका को निरंतर प्रकाशित करते हुए उसे समृद्ध भी कर रहा है। इससे आपसी संवाद के साथ नई-नई जानकारियाँ भी प्राप्त होती हैं। भारत सरकार की राजभाषा नीति के अनुपालन में पत्रिकाओं का प्रकाशन एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है।

यह पत्रिका साहित्यिक एवं भाषायी स्तर पर एक नया मानदण्ड स्थापित करे और पाठकों के बीच लोकप्रिय बने, यही मेरी कामना है।


(छत्रसाल सिंह)



विजय कुमार

मुख्य राजभाषा अधिकारी एवं
प्रधान मुख्य सामग्री प्रबंधक

पूर्व मध्य रेल

हाजीपुर

Phone: 06224-274340 (O)
23600 (Rly)



संदेश

जनसंचार के क्षेत्र में आज भी पत्रिकाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। ये अपने क्षेत्र की गतिविधियों को अन्य क्षेत्रों तक पहुँचाती हैं और एक प्रकार से संवाद-सेतु का निर्माण करती हैं। रेलों से प्रकाशित पत्रिकाएँ रेलकर्मियों में सृजनात्मकता और लेखन के प्रति रुचि उत्पन्न करने में उत्प्रेरक का कार्य करती हैं। इससे न केवल उनकी रचनात्मक प्रतिभा व कौशल में निखार आता है, बल्कि उनकी भाषा भी समृद्ध होती है।

हिंदी भाषा का प्रचार-प्रसार राष्ट्रीय आवश्यकता है। यह केवल एक विभाग अथवा सरकार का कार्य नहीं है, बल्कि हम सभी को मिल-जुल कर उस राष्ट्रीय आवश्यकता की पूर्ति करनी है। भारत सरकार के निर्देशानुसार एवं संविधान के आलोक में राजभाषा हिंदी के प्रयोग-प्रसार में सहयोग करना केन्द्र सरकार के सेवकों का कर्तव्य है। साथ ही आम-जन के साथ रोजमर्रा के व्यवहार में हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करके हम जनतंत्र को सद्बुद बना सकते हैं।

हिंदी पत्रिका 'वैशाली' का नियमित प्रकाशन हिंदी के प्रयोग-प्रसार का एक सशक्त माध्यम है। यह पत्रिका रेल के अधिकारियों, कर्मचारियों एवं उनके परिवार के सदस्यों को अपनी रचनात्मक प्रतिभाओं को उजागर करने का एक मंच प्रदान करती है।

हमें विश्वास है कि महावीर की जन्मभूमि, बुद्ध की कर्मभूमि तथा आम्रपाली की नृत्यभूमि वैशाली से प्रकाशित यह पत्रिका सफलता के नए शिखर पर अवश्य ही आरूढ़ होगी। पत्रिका अपनी निरंतरता के साथ गुणवत्ता भी बनाए रखे, यही मेरी शुभकामना है।

(विजय कुमार)



संपादकीय

हिंदी को संपूर्ण भारत की भाषा बनाने के लिए वे लोग बढ़-चढ़कर सामने आए थे जिनकी अपनी मातृभाषा हिंदी नहीं थी। महात्मा गाँधी मूलतः गुजराती थे। भाषा द्वारा जोड़ने की शक्ति से भलीभाँति अवगत थे। तभी भारत देश को एक सूत्र में बांधने के लिए उन्होंने हिन्दुस्तानी हिंदी को महत्व दिया। काका कालेलकर के नाम से विख्यात मूलतः मराठी भाषी और गुजराती विद्वान दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर प्रतिबद्ध हिंदी सेवी थे।

इसी प्रकार मूल रूप से गुजराती सरदार पटेल भी हिंदी के हिमायती थे। उन्होंने कहा था- “हमारा संकल्प हिंदी को राजभाषा बनाने का होना चाहिए। राष्ट्रीय एकता के लिए एक भाषा आवश्यक है, और अंग्रेजी की जगह हिन्दी लाने का संकल्प शीघ्र लागू किया जाए।” गुजरात के ही स्वामी दयानन्द सरस्वती की हिंदी सेवा ऐतिहासिक है।

वास्तव में हिंदी को अनेक हिंदीतर भाषी हिंदी सेवियों ने सींचा है। कवि सुब्रह्मण्यम भारती, एम सत्यनारायण राव, टी एस के कण्णन, हंसराज रेड्डी, राजा राममोहन राय, सी राजगोपालाचारी, केशवचन्द्र सेन, स्वामी दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज, एनी बेसेन्ट, विनायक दामोदर सावरकर, बाबूराव विष्णु पराड़कर और रामनाथ रामचन्द्र दिवाकर आदि दिग्गजों और उनके अवदानों की एक लंबी सूची है

ऐसे में अगर किसी राज्य में हिंदी के विरोध में माहौल बनाया जाता है तो उन्हें बताना चाहिए कि ऐसी कौन सी भाषा है जिसमें भारत के जन-जन की भाषा बनने की क्षमता व संभावना है। ऐसे लोगों को यह भी बताना चाहिए कि हमारे पुरखे जो हिंदी की हिमायत करते थे क्या उनका मत विवेकसम्मत नहीं था। वस्तुतः हिंदी का इतिहास रहा है कि वह स्वयंमेव सरिता की तरह प्रवाहित होती रही है। उसका कभी भी किसी भाषा से प्रतियोगिता नहीं रही है। उसका विकास विरोधों के बीच भी होता रहा है और हमेशा होता रहेगा।

बहरहाल, राजभाषा पत्रिका ‘वैशाली’ का अंक-30 आप सुधी पाठकों के समक्ष रखते हुए हर्ष व गर्व की अनुभूति हो रही है। आशा है आपको यह अंक अवश्य पसंद आएगा।

संतोष कुमार गुप्ता



वैशाली

जून, 2025, अंक-30

संरक्षक

छत्रसाल सिंह

महाप्रबंधक



प्रबंध संपादक

विजय कुमार

मुख्य राजभाषा अधिकारी एवं

प्रधान मुख्य सामग्री प्रबंधक



प्रधान संपादक

संतोष कुमार गुप्ता

उप मुख्य राजभाषा अधिकारी एवं

उप विसमुलेधि (सामान्य)



संपादक

अनिल कुमार शर्मा

राजभाषा अधिकारी



उप संपादक

राजकिशोर सिंह

वरि. अनुवादक



संपादन सहयोग

सुमित कुमार झा

वरि. अनुवादक



संपर्क

राजभाषा विभाग, पूर्व मध्य रेल

मुख्यालय, हाजीपुर, बिहार-844101

दूरभाष : 06224-276951

22968 (रेल), 22918 (रेल)

dgmrajbhasha@railways.gov.in

मो.-9771425656, 9771425667

क्र.स.	विषय	लेखक/कवि	पृष्ठ सं.
	विरासत	राजकमल चौधरी	03
1.	कवच प्रणाली...ट्रेन टक्कर बचाव...	रवि प्रकाश	05
2.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में 'योग का महत्व'	डॉ. मुकेश कुमार सिन्हा	08
3.	सांस्कृतिक एकता एवं रेलवे	सत्येन्द्र पांडेय	11
4.	आनुवांशिक बीमारियां आवश्यक रूप...	हरेन्द्र सिंह	14
5.	वृक्षों का महात्म्य	डॉ. मेहता नागेन्द्र सिंह	16
6.	आरसी प्रसाद : लीक से हटकर...	ज्वाला सांध्यपुष्प	18
7.	मोबाईल में उलझता बाल मन	नवीन कुमार	20
8.	सिन्दूर का शौर्य	वैष्णवी परमार	21
9.	नई शिक्षा नीति	संजय ठाकुर	22
10.	बड़ी उपलब्धियों व आशातीत...	सीताराम गुप्ता	25
11.	होली	प्रेम कुमार राय	27
12.	दरकते रिश्ते	निशा सहगल	29
13.	असली पागल कौन?	रमेश कुमार 'राही'	32
14.	भारतीय समाज में बदलते पारिवारिक...	सीमा रानी	36
15.	रिटायरमेंट	राकेश रौशन	38
16.	धर्म तत्त्व	सुमन कुमार वर्मा	40
17.	रईसों की पहचान उनके कुत्तों...	ललन चतुर्वेदी	41
18.	चार गज़लें	डॉ. कविता विकास	43
19.	दो कविताएँ	महेश कुमार केशरी	44
20.	एहसास (कविता)	एम पी बर्नी	45
21.	दो कविताएँ	दुखित महतो भक्तराज	46
22.	उसपार-इसपार (कविता)	प्रिन्स कुमार	47
23.	मोहब्बत का मुकाम	प्रियदर्शी अजय	47
24.	कहूँ तो किसे कहूँ (कविता)	रवीन्द्र कुमार रतन	48
25.	आजादी का अमृतकाल	जुही बालाकर्ण	48

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार रचनाकारों के हैं, इसके लिए संपादक मंडल जिम्मेदार नहीं है।

विरासत.....

राजकमल चौधरी की जीवनी.....



अकविता दौर के प्रमुख कवि-कथाकार राजकमल चौधरी हिंदी साहित्यिक परिदृश्य के प्रतिभाशाली, विवादास्पद और रोचक किरदार के रूप में याद किए जाते हैं। जन्मतिथि और जन्म स्थान को लेकर कुछ विवादों के साथ आम तौर पर माना जाता है कि उनका जन्म 13 दिसंबर 1929 को उनके ननिहाल रामपुर हवेली, जिला मधेपुरा, बिहार में हुआ था। उनके नाम और नाम प्रयोग को लेकर भी कई कथाएँ प्रचलित हैं। उन्होंने स्वयं अपनी डायरी में लिखा है कि पिता ने तीनों भाइयों को वीर, धीर, सुधीर का नाम दिया था जबकि उनके स्कूली दोस्त उन्हें फूल बाबू पुकारते थे। स्कूली सर्टिफिकेट में उनका नाम मणींद्र नारायण था। राजकमल चौधरी उनका साहित्यिक उपनाम था जिस तक पहुँचते मणींद्र किरण, पुष्पतीर्थ, स्वर्णफूल, पुष्पराज, मणींद्र राजकमल और

फिर राजकमल की नाम-यात्राओं से गुजरे थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने मणि मधुसूदन दास, मासूम अजीमाबादी, अनामिका चौधरी, वनलता सिंह, शशि चौधरी आदि छद्म नामों से भी लेखन किया।

हिंदी कविता में राजकमल चौधरी को उनके कथ्य और काव्य तकनीक के लिए जाना जाता है। वे शब्दों को इतर तरीके से बरतने के शौकीन थे जिन पर उनके निजत्व की एक छाप नजर आती है। उन्होंने अपनी कविताओं और गद्य के लिए जो भाषा विकसित की वह ताजा और आकर्षक थी। उनकी कविताओं पर देह और राजनीति पर अधिक एकाग्र होने का आरोप तो लगाया जाता है, लेकिन उनमें व्यक्त संत्रास, घुटन, अकेलेपन, आशंका, विसंगति, फूहड़ता, विद्रूपता आदि से ही समकालीन जीवन और यथार्थ की अभिव्यक्ति हो पाती है।

अकूत लेखन प्रतिभा के धनी राजकमल चौधरी ने मैथिली और हिंदी में लगभग 250 कविताएँ, 92 कहानियाँ, 55 निबंध, 8 उपन्यास, 3 नाटक और कई लेख लिखे हैं। 'कंकावती', 'विचित्रा', 'इस अकालबेला में', 'ऑडिट रिपोर्ट' आदि में उनकी कविताओं का संकलन हुआ है जबकि 'मछली जाल' और 'प्रतिनिधि कहानियाँ' उनकी कहानियों के संग्रह हैं। 'मछली मरी हुई', 'देहगाथा', 'नदी बहती थी', 'शहर था शहर नहीं था', 'अग्निस्नान', 'बीस रानियों के बाइस्कोप', 'एक अनार सौ बीमार' उनके प्रमुख उपन्यास हैं। उनके समस्त लेखन का संग्रह राजकमल चौधरी रचनावली के 8 खंडों में किया गया है।

19 जून 1967 को महज 37 वर्ष की आयु में उनका निधन हो गया।

नींद में भटकता हुआ आदमी

नींद की एकांत सड़कों पर भागते हुए आवारा सपने।
सेकेंड-शो से लौटती हुई बीमार टैक्सियाँ,
भोथरी छुरी जैसी चीखें
बेहोश औरत की ठहरी हुई आँखों की तरह रात।
बिजली के लगातार खंभे पीछा करते हैं;
साए बहुत दूर छूट जाते हैं
साए टूट जाते हैं।
मैं अकेला हूँ।
मैं टैक्सियों में अकारण खिलखिलाता हूँ,
मैं चुपचाप फुटपाथ पर अँधेरे में अकारण खड़ा हूँ।
भोथरी छुरी जैसी चीखें
और आँधी में टूटते हुए खुले दरवाजों की तरह ठहाके
एक साथ
मेरे कलेजे से उभरते हैं
मैं अँधेरे में हूँ और चुपचाप हूँ।
सतमी के चाँद की नोक मेरी पीठ में धँस जाती है।
मेरे लहू से भीग जाते हैं टैक्सियों के आरामदेह गद्दे
फुटपाथ पर रेंगते रहते हैं सुर्ख-सुर्ख दाग।
किसी भी ऊँचे मकान की खिड़की से
नींद में बोझिल-बोझिल पलकें
नहीं झाँकती हैं।
किसी हरे पौधे की कोमल, नन्हीं शाखें,
शाखें और फूल,
फूल और सुगंधियाँ
मेरी आत्मा में नहीं फैलती हैं।
टैक्सी में भी हूँ और फुटपाथ पर खड़ा भी हूँ।
मैं
सोए हुए शहर की नस-नस में
किसी मासूम बच्चे की तरह, जिसकी माँ खो गई है,
भटकता रहता हूँ;
(मेरी नई आजादी और मेरी नई मुसीबतें... उफ!)
चीख और ठहाके
एक साथ मेरे कलेजे से उभरते हैं।

चाय के प्याले में

दुख करने का असली कारण है पैसा
पहले से कम चीजें खरीदता है।
कश्मीरी सेव दिल के मरीज को चाहिए
तो क्या हुआ ?

परिश्रम अब पहले से कम पैसे खरीदता है।

हम सबके लिए काम इतना ही बचा है कि सुबह वक्त
पर शेव कर सकें।

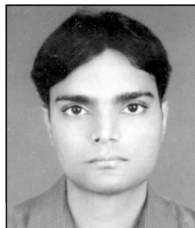
शाम को घर में चाय, और
पड़ोसियों के बारे में घरेलू कहानियाँ,
हजार छोटे दंगे-फसाद होते हैं,

इतिहास और आर्थिक सभ्यता को उजागर करने
के लिए एक बड़ी लड़ाई नहीं होती।
आदमी केले खरीदने में व्यस्त रहता है,
(और) बीते हुए, और नहीं बीते हुए
के बीच कड़ी बनकर एक छोटी-सी
मक्खी पड़ी रहती है, चाय के अधखाली प्याले में



कवच प्रणाली-भारत की स्वदेशी ट्रेन टक्कर बचाव तकनीक

- रवि प्रकाश



हाल के दिनों में हुए ट्रेन हादसों के बाद लोगों की सुरक्षा को लेकर सवाल उठ रहे हैं. ऐसे में कवच सुरक्षा की चर्चा भी जोर शोर से हो रही है. भारतीय रेलवे कवच सिस्टम पर जोर शोर से काम भी कर रही है. ऐसे में सवाल उठ रहा है कि कवच सिस्टम क्या है और यह रेल यात्रा के दौरान हादसों से सुरक्षा कैसे प्रदान करेगा. बता दें, रेल कवच सिस्टम स्वदेशी रूप से विकसित ऑटोमैटिक ट्रेन प्रोटेक्शन सिस्टम है। रेलवे कवच लोको पायलट को खतरे में सिग्नल पास करने से लेकर तेज गति से गाड़ी चलाने से बचाव में मदद करता है। इसके अलावा यह खराब मौसम में भी लोको पायलट को ट्रेन चलाने में मदद करता है।



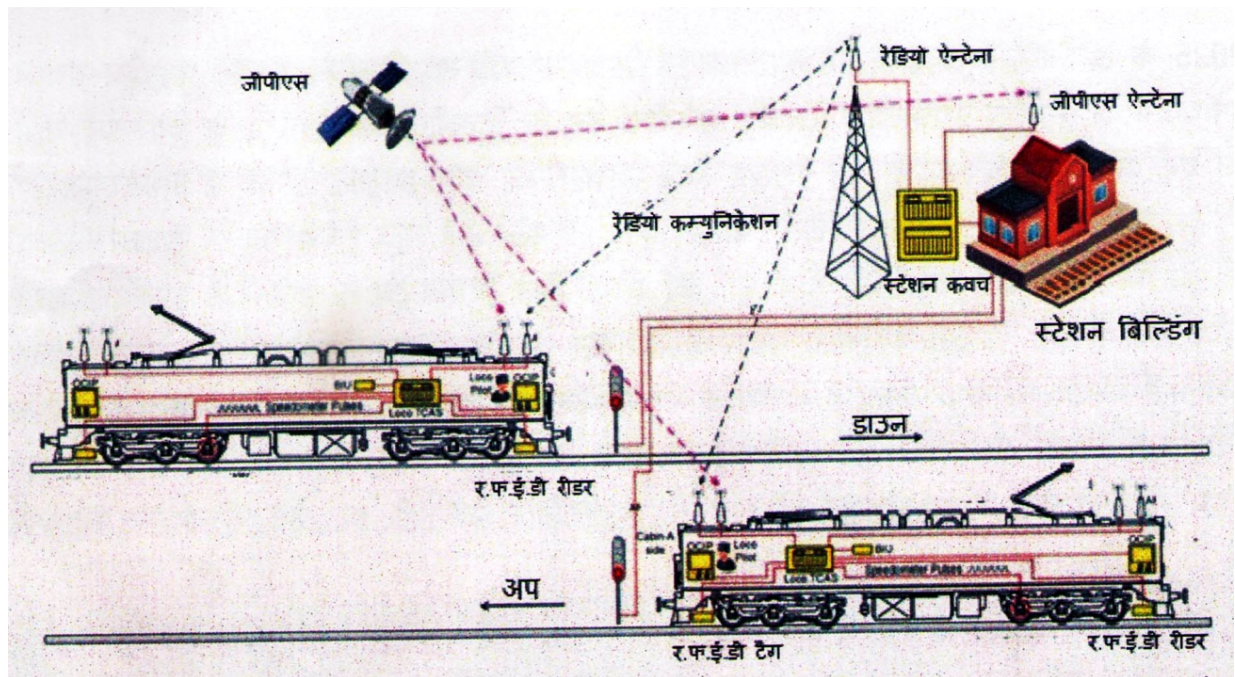
जैसा कि हम सभी जानते हैं, रेलवे का 34,000 रूट कि.मी 11,000 रूट किलोमीटर ऊंचा नेटवर्क घनत्व नेटवर्क (एचडीएन) और 23,000 रूट किमी हाईली यूटिलाइज्ड नेटवर्क (एचयूएन) 96% वहन करता है। राष्ट्रीय रेल योजना (एनआरपी) की परिकल्पना है अधिक व्यवसाय आकर्षित करना। इन मार्गों पर सुधार करके करना है। उच्च गति और उच्च घनत्व के आगमन के साथ भारतीय रेल के नेटवर्क की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए स्वचालित ट्रेन प्रणाली लागू करना अनिवार्य है-रेलवे बोर्ड द्वारा जारी मौजूदा दिशानिर्देशों के अनुसार, स्वदेशी रूप से आरडीएसओ द्वारा विकसित किया गया है इस प्रणाली को पूरे भारत में लागू किया जाना है आज इस प्रणाली को भारतीय रेल को शीघ्रता से तैनात करने की जरूरत है।

कवच सिस्टम के फायदे :-

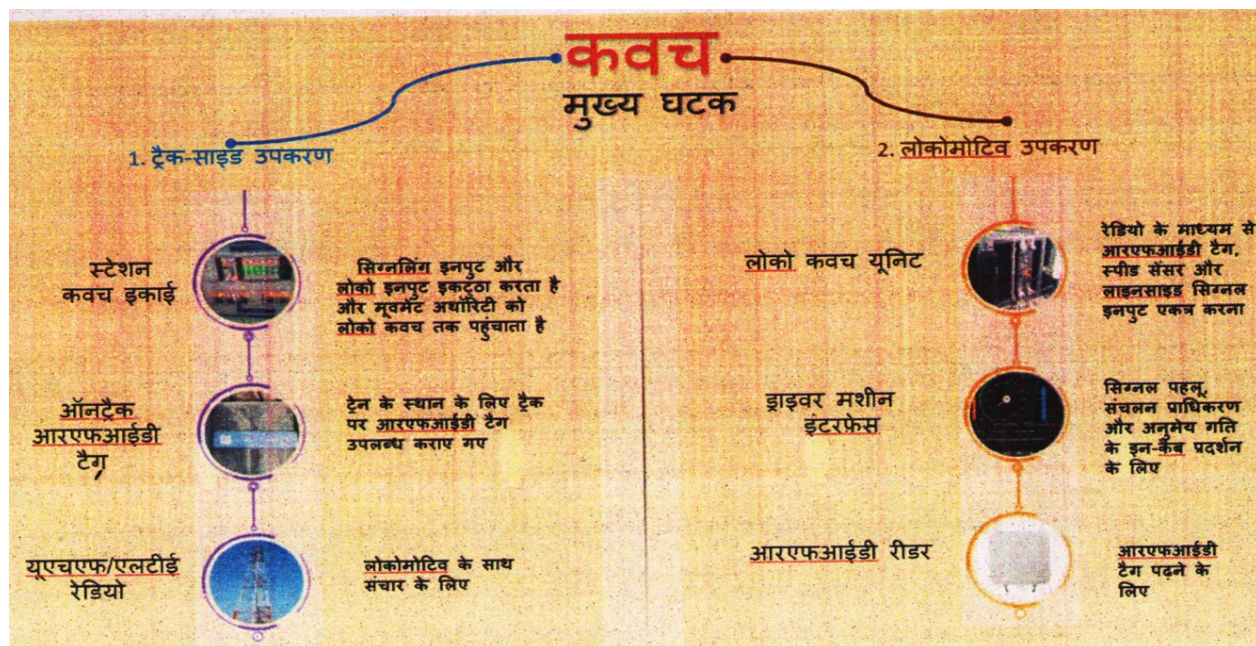
- इस सिस्टम की सबसे बड़ी खासियत है कि यह ट्रेनों के टकराने की संभावना को काफी कम कर देता है।
- खराब मौसम में भी लोको पायलट के ट्रेन चलाने में

मदद कर सकता है।

- इमरजेंसी हालात में यह ट्रेन पर ऑटोमेटिक ब्रेक लगाकर उसे रोक सकता है या गति धीमा कर सकता है।
- कवच सिस्टम एक ट्रेन को ऑटोमेटिक रूप से रोक देगी जब उसे एक निर्धारित दूरी पर उसी लाइन पर दूसरी ट्रेन के होने की जानकारी मिलेगी।
- यह सिस्टम रेड लाइट को नजरअंदाज करने पर या किसी अन्य खराबी आ जाने पर ट्रेन अपने आप रोक देगी।
- अगर लोको पायलट ब्रेक लगाने में किसी कारण असफल रहता है तो कवच टेक्नोलॉजी अपने आप ट्रेन में ब्रेक लगा देती है।
- एलसी गेट्स पास आते ही बिना लोको पायलट के कवच सिस्टम अपने आप हार्न बजाना शुरू कर देगा।
- लोको टू लोको कम्युनिकेशन के कारण दो ट्रेनों के बीच की टक्कर से यह सिस्टम बचाव करता है।



यह प्रौद्योगिकी माइक्रो प्रोसेसर, ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम और रेडियो संचार के माध्यमों से जुड़ा रहता है।



यात्री संरक्षा और सुरक्षा के प्रति सदैव तत्पर भारतीय रेलवे नई तकनीकों का उपयोग करता रहता है। इसी क्रम में पूर्व मध्य रेल द्वारा मिशन रफ्तार के तहत पं. दीन दयाल उपाध्याय जं. से प्रधानखांटा तक ट्रेनों के संचालन में संरक्षा को बढ़ावा देने के लिए स्वदेशी स्वचालित ट्रेन सुरक्षा प्रणाली 'कवच' के अंतर्गत लाने की प्रक्रिया शुरू कर दी है। इस पूरी परियोजना को वर्ष 2025 के अंत तक पूरा कर लेने का लक्ष्य है। लगभग 417 रूट किलोमीटर लंबे पं. दीन दयाल उपाध्याय जं. मानपुर-प्रधानखांटा रेलखंड भारतीय रेल के दिल्ली-हावड़ा रेलखंड के व्यस्ततम मार्ग का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह रेलखंड उत्तर प्रदेश, बिहार और झारखंड राज्य से होकर गुजरता है। इस रेलखंड पर 08 जंक्शन स्टेशन सहित कुल 69 स्टेशन हैं। पूर्व मध्य रेल के कुशल नेतृत्व में अबतक 192 किमी मार्ग का कार्य पूरा कर लिया गया है। 38 ट्रेन के इंजनो में उपकरण लगा दिया गया है। इस रेलखंड पर सभी प्रकार के मिश्रित यातायात, माल ढुलाई, मेल/एक्सप्रेस, पैसेंजर ट्रेनों का परिचालन किया जाता है। वर्तमान में इस रेलखंड पर 100 से 130 किमी/घंटा की गति स्वीकृत है। मिशन रफ्तार के तहत इसे बढ़ाकर 160 किमी/घंटा करने का लक्ष्य रखा गया है। इस संबंध में रेलवे ट्रैक के सुदृढीकरण

का कार्य भी तीव्रगति से जारी है। इस पूरी परियोजना को वर्ष 2025 के अंत तक पूरा कर लेने का लक्ष्य है।

इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए पूर्व मध्य रेल द्वारा कम घनत्व वाले रेलवे ट्रैक (1563 मार्ग किमी) जिसमें धनबाद, पं. दीन दयाल उपाध्याय, दानापुर, सोनपुर और समस्तीपुर मंडलों के विभिन्न रेल खंड शामिल हैं, पर स्वदेशी ट्रेन टक्कर बचाव प्रणाली (कवच) के प्रावधान का कार्य जोर-शोर से जारी है। बाकी पूर्व मध्य रेल के 2200 मार्ग किमी के लिए कवच के प्रावधान के लिए प्रस्ताव रेलवे बोर्ड को मंजूरी के लिए भेज दिया गया है। इस तरह आने वाले कुछ सालों में पूर्व मध्य रेल पूर्ण रूप से कवच से सज्जित होगा। इस तकनीक के इस्तेमाल से भविष्य में होने वाली रेल दुर्घटनाओं में काफी कमी आएगी। इन नई तकनीकों का उपयोग कर के बहुत जल्द भारतीय रेलवे जीरो ट्रेन एक्सिडेंट और जीरो ट्रेन डिरेलमेंट के नए कीर्तिमान को छू लेगी।

सीनियर सेक्शन इंजीनियर/टेलिकॉम/
सिग्नल एंड टेलिकॉम डिपार्टमेंट
पूर्व मध्य रेल हाजीपुर

‘वर्तमान परिप्रेक्ष्य में योग का महत्त्व’

– डॉ. मुकेश कुमार सिन्हा



वर्तमान समय में मनुष्य जैसे-जैसे आधुनिकता की ओर बढ़ रहा है, मानव जीवन तनाव पूर्ण होता जा रहा है। विद्यार्थी से लेकर नौकरी पेशा वाले सभी लोग तनावपूर्ण जीवन जीने के लिए विवश हो गये हैं। ऐसी स्थिति में योगाभ्यास ही एक ऐसा उपाय है जिसे करके मानव अपने जीवन को तनाव मुक्त एवं सुव्यवस्थित जीवन जी सकता है। अब प्रश्न यह है कि योग क्या है। अधिकांश लोग यह समझ नहीं पाते कि योग और व्यायाम में अन्तर है, दोनों दो चीजें हैं।

योग क्या है?

योग शब्द की उत्पत्ति ‘युज’ धातु से है जिसका अर्थ है ‘मिलना, जोड़ना’। दो वस्तुओं को मिलाना ही योग कहलाता है जैसे- शक्ति का शिव से मिलाना, आत्मा का परमात्मा से मिलाना। जो विज्ञान हमें इन सबका ज्ञान कराता है वही योग विज्ञान कहलाता है। महर्षि पतंजलि ने अपनी पुस्तक योग दर्शन में योग को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ‘योगश्चित्तवृत्ति विरोध ही योग है। अर्थात् योग योगसाधक के भटकावों को रोकता है। योग साधन के द्वारा ही मनुष्य के व्यक्तित्व का समग्र विकास संभव है। नियमित रूप से योगासन करने से मानव शरीर पुष्ट और सुन्दर बनता है, शक्ति और स्फूर्ति आती है। शरीर में क्रियाशीलता बनी रहती है। योगाभ्यास मनुष्य के आन्तरिक एवं बाहरी स्वास्थ्य की वृद्धि करता है। भौतिक और आध्यात्मिक दोनों शक्तियों का विकास योग द्वारा होता है।

कुछ लोग योग को व्यायाम ही समझते हैं जबकि योग और व्यायाम दोनों अलग-अलग हैं। योग और

व्यायाम में अन्तर है।

योग और व्यायाम में अन्तर

मानव शरीर की रीढ़ से 33 जोड़े स्नायु निकल कर सभी अवयवों से जुड़े हुए हैं और प्रत्येक योगासन का प्रभाव रीढ़ तथा उदरस्थ अंगों पर होता है। फलतः सभी अंगों को समूचित मात्रा में ऊर्जा प्राप्त होती है। योगासन से मांसपेशियों में खिंचाव एवं फैलाव होता है जिससे उनमें लचीलापन बढ़ता है। रक्त संचार की क्रिया बढ़ती है और स्नायु संस्थानों पर अतिरिक्त भार नहीं पड़ता है।

व्यायाम में मांसपेशियों पर दबाव पड़ता है जिससे शरीर के अंदर की रक्त वाहिनियाँ टूटती-फूटती हैं और फिर एक विशेष प्रकार का आकार ग्रहण कर लेती हैं। फलतः उनमें कठोरता आ जाती है। व्यायाम से श्वास, हृदयगति तथा रक्तचाप में वृद्धि होने से फेफड़े तथा हृदय पर अतिरिक्त बोझ पड़ता है। व्यायाम संबंधी क्रियाएँ संवेदी सिम्पेथेटिक सिस्टम को उत्तेजित करती हैं। जबकि आसन रिफ्लैक्स एक्टिविटीज को क्रियाशील करने के साथ-साथ नियंत्रित करते हैं। मस्तिष्क पर दबाव कम पड़ता है। इसलिए व्यायाम की अपेक्षा योगासन हितकर है।

योग का शारीरिक महत्त्व :

योग प्राचीन भारतीय परम्परा एवं संस्कृति की अमूल्य देन है। योगाभ्यास शरीर एवं मन, विचार एवं कर्म, आत्मसंयम एवं पूर्णता की एकात्मकता तथा मानव एवं प्रकृति के बीच सामंजस्य प्रदान करता है। यह स्वास्थ्य तथा मानव प्रकृति के बीच सामंजस्य प्रदान करता है। यह स्वास्थ्य तथा कल्याण का पूर्णतावादी दृष्टिकोण है। योग मात्र व्यायाम नहीं है, बल्कि स्वयं के साथ विश्व और प्रकृति के साथ एकत्व खोजने का भाव है। योग हमारी जीवनशैली में परिवर्तन लाकर हमारे

अन्दर जागरूकता उत्पन्न करता है तथा प्राकृतिक परिवर्तन से शरीर में होने वाले बदलावों को सहन करने की क्षमता प्रदान करता है। नियमित योगाभ्यास हमारे शरीर को रोगमुक्त करके शरीर को नवजीवन प्रदान करता है। वर्ष 2021-22 में कोरोना काल में सामान्य लोगों को भी इसके प्रभावों से रूबरू होने का मौका मिला। जो लोग भी नियमित योगाभ्यास कर रहे थे तथा खान-पान पर विशेष ध्यान दे रहे थे उनको कोरोना काल में भी स्वास्थ्य लाभ मिला। नियमित योगाभ्यास से शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है किसी भी प्रकार का बाहरी संक्रमण शरीर पर हावी नहीं हो सकता है। इस तरह देखा जाए तो शारीरिक दृष्टिकोण से योगाभ्यास का महत्त्व काफी बढ़ जाता है। मानव शरीर का कोई ऐसा रोग नहीं जो नियमित योगाभ्यास से दूर नहीं किया जा सके।

योग का वैज्ञानिक महत्त्व:

योग के विषय में यह एक भ्रामक धारणा है कि यह केवल मनीषियों और आध्यात्मिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ही सीमित है। वास्तविकता यह है कि इसकी संरचना पूर्ण रूप से वैज्ञानिक है। योग मात्र व्यायाम अथवा रोगों से छुटकारा दिलाने वाली दवा नहीं है, अपितु एक सम्पूर्ण विज्ञान है जिनके द्वारा मनुष्य अपनी शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास कर सकता है। मानव शरीर ईश्वर द्वारा रचित एक ऐसी जटिल स्वचालित मशीन है जिसमें विभिन्न अंग विभिन्न कार्यों का संपादन एक साथ करते हैं। मानव शरीर के स्वरूप रख रखाव के लिए योग अत्यंत आवश्यक है। योगाभ्यास से मानव शरीर में जो भी अंतःस्रावी ग्रंथियाँ हैं यथा-थायमस, थायरायड, पिट्यूटरी, एड्रीनल तथा गोनायड्स ग्रंथियों के स्रावों को नियमित करता है जिससे शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है। मानव शरीर स्वस्थ एवं सुदौल रहता है।

योगाभ्यास से पेट के सभी अवयव जैसे किडनी पैंक्रियाज, छोटी-बड़ी आंत के साथ-साथ लिवर तथा पेडू जैसे अवयवों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है। योगाभ्यास से रीढ़ की हड्डी पर भी काफी प्रभाव पड़ता है। रीढ़ की हड्डी के निचले भाग से एक साइटिका नर्व निकलता है जो जांघों से होते हुए पैर तक जाता है।

सायटिका नर्व में जब दर्द होता है तो वह काफी कष्टदायक होता है। सायटिका के रोगों को हमेशा दर्द निवारक गोलियों पर निर्भर रहना पड़ता है। नियमित योगाभ्यास से सायटिका के दर्द से मुक्ति मिलती है। योगाभ्यास मोटापा तथा शरीर के अतिरिक्त चर्बी को कम करके चुस्ती पूर्ति प्रदान करता है।

योग का आधुनिक महत्त्व:

योग एक विज्ञान एवं जीवन जीने का तरीका है, जिसका उद्देश्य मानव शरीर में स्वस्थ मन का निर्माण करना है। वास्तव में योग एक अनुशासन है जो मानव शरीर और मन का मिलन कर मनुष्य को उनकी अनंत क्षमताओं एवं कर्म में कुशलता आती है। गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है कि

‘बुद्धियुवतो जहातीह उभे सेकृतदुष्कृते।

तस्माद्यो जाय युन्यस्व योगः कमसु कौशलम्॥’

(स्रोत श्रीमद्भगवत गीता अ-2 श्लोक-50)

निरंतर समर्पित भाव से योग करने से बुरे कर्मों का नाश होता है तथा मनुष्य के कर्म में कुशलता आती है। कर्म करते हुए मनुष्य कर्म बंधन से मुक्त हो जाता है। सही मायने में यही जीवन जीने की कला है।

आजकल भाग दौड़ भरी जिंदगी होने के कारण हमारा स्ट्रेस लेवल बहुत बढ़ जाता है जिससे अच्छी नींद नहीं आती। हमारे शरीर में स्ट्रेस के कारण कॉर्टिसोल हार्मोन की मात्रा बढ़ जाती है। कॉर्टिसोल संतुलित करने के लिए एच पी ए एक्सिस हाइपोथैलमैज, पीट्यूटरी एवं एड्रीनल ग्लैंड को

संतुलित करने की जरूरत पड़ती है। एच पी ए एक्सिस के संतुलित रहने पर मनुष्य एकदम शारीरिक एवं मानसिक स्तर पर फिट एवं चुस्त दुरुस्त रहता है। जरा भी स्ट्रेस नहीं होता है।

योग का सामाजिक महत्व:

योग के लिए आहार शुद्धिकरण अत्यन्त आवश्यक है। कहा भी गया है कि जैसा हम आहार ग्रहण करते हैं वैसा ही हमारा विचार बनता है, जिसका असर परिवार संचालन एवं सामाजिक क्रियाकलापों पर पड़ता है। मनुष्य का विचार ही परिवार और समाज के महत्व को बढ़ाता है। आज जो भी कुछ हम खाते पीते हैं वे सब मिलावटी एवं प्रदूषित है। इनका दुष्प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ता है। इसलिए हमें अपने आहार पर ध्यान देना चाहिए। समय-समय पर अपने शरीर का शुद्धिकरण जरूरी है ताकि हमारा शरीर विषाक्त से मुक्त हो सके। हम जो कुछ भी खाएँ वह शुद्ध स्वच्छ, संतुलित व पौष्टिकता से भरपूर होना चाहिए। योग में शुद्धिकरण की क्रियाएँ होती हैं शारीरिक रूप से, मानसिक रूप से और भावनात्मक रूप से इन तीनों स्तरों पर हमें समय-समय पर शुद्धिकरण की जरूरत होती है।

आहार शुद्धिकरण का प्रभाव मनुष्य के विचार पर भी पड़ता है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव मनुष्य के पारिवारिक जीवन एवं समाज पर पड़ता है। मनुष्य के अंदर से नकारात्मक विचार नष्ट होते हैं और सकारात्मक विचारों का उदय होता है, जिससे परिवार एवं समाज में स्वस्थ वातावरण का निर्माण होता है। तनाव एवं क्लेश का नाश हो जाता है।

उपर्युक्त योग के वैज्ञानिक, आधुनिक एवं सामाजिक महत्व पर प्रकाश डालने पर ऐसा प्रतीत होता है कि योग मनुष्य के जीवन के लिए काफी उपयोगी है। इससे न केवल परिवार एवं समाज का वैचारिक परिवर्तन होता है बल्कि विश्व स्तर पर भी इसकी उपयोगिता एवं महत्व को देखा गया है। तभी तो भारत सरकार के अनुरोध पर वर्ष 2014 में संयुक्त राष्ट्र संघ

की महासभा के रिकॉर्ड 193 देशों में 177 देशों ने ध्वनि मत से भारतीय योग ज्ञान को स्वीकार किया। 21 जून को योग दिवस के रूप में मनाने के लिए स्वीकार किया गया। ग्रीष्म संक्रमण काल के बाद सूर्य दक्षिणायण हो जाता है, जो कि आध्यात्मिक ऊर्जा प्राप्त करने के लिए सबसे उचित समय माना गया है। 21 जून को वर्ष का सबसे लंबा दिन होता है। इस दिन सूर्योदय समय से पहले होता है और सूर्यास्त देर से होता है। इसलिए इस दिन को योग दिवस मनाने के लिए सर्वथा उचित दिन माना गया। इसीलिए संयुक्त राष्ट्र महासभा ने प्रतिवर्ष 21 जून को अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाने का निश्चय किया।

आज दुनिया तनाव से गुजर रही है। ऐसे में योग की उपयोगिता और बढ़ जाती है। योग हमें शांति का मार्ग प्रशस्त करती है। योग को जन आन्दोलन बनाकर विश्व को शांति, और स्वास्थ्य की ओर ले जाने का प्रयास होना चाहिए। अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस योग के द्वारा वैचारिक क्रांति लाकर पूरे विश्व को आतंक मुक्त, तनाव मुक्त एवं एकता के सूत्र में बांधने का एक सफल प्रयास है।

संदर्भ सूची:

1. श्रीमद्भगवतगीता
2. छन्दोग्योपनिषद्
3. पतंजलि योग दर्शन
4. अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस, 21 जून, सामान्य योग अभ्यास क्रम(प्रोटोकॉल), भारत सरकार, आयुष मंत्रालय, नई दिल्ली
5. योग साधना व योग चिकित्सा रहस्य, स्वामी रामदेव, दिव्य प्रकाशन, दिव्य योग मंदिर ट्रस्ट कृपालुबाग आश्रम, कनखल, हरिद्वार, उत्तरांचल, जुलाई-2004।

- ध्यान एवं योग प्रशिक्षण
क्षेत्रीय रेल प्रशिक्षण संस्थान
पूर्व मध्य रेल, मुजफ्फरपुर

सांस्कृतिक एकता एवं रेलवे

- सत्येन्द्र पाण्डेय



ब्रह्म समाज के आन्दोलन के दिनों में संभवतः अंग्रेजी के शब्द 'कल्चर' को व्यक्त करने के लिए 'संस्कृति' शब्द का निर्माण किया गया था। कौटिल्य ने संस्कृति के अर्थ में 'विनय' शब्द का प्रयोग किया है। 'संस्कृति' शब्द जितना प्रचलित है, उतना ही उसका अर्थ अस्पष्ट है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी रुचि एवं संस्कार के अनुसार इसका अर्थ कर लेता है, चूँकि प्रत्येक व्यक्ति इसको समझने का दावा भी करता है। प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएँ ही संस्कृति है, अन्यथा बाह्य और आभ्यन्तर गुणों को जब हम शील के परिप्रेक्ष्य में अभिव्यक्त करते हैं तब संस्कृति से साक्षात्कार होता है। संस्कृति जीवन का श्रेयस पक्ष है। संस्कृति किसी समुदाय, जाति एवं देश की आत्मा होती है। वह शब्द की खोज में शील की ध्वजा लेकर चलती है। हम इस संस्कृति को खंडों में विभक्त करने का निरर्थक प्रयास करते हैं, मसलन- भारतीय-संस्कृति, मुगल- संस्कृति तथा पाश्चात्य संस्कृति। हमारे चिंतन के उदात्तीकरण की प्रेरणा का नाम संस्कृति है। 'शील' एवं 'विनय' इस संस्कृति के बालक हैं। रुडयार्ड किपलिंग ने पहले तो यह कहा था कि 'पूर्व और पश्चिम कभी मिल नहीं सकते' (The east is east, The west is west, The twins shall never meet) परंतु उनको तत्काल अपनी भूल समझ में आ गयी। उनकी अंतरात्मा ने कहा कि देश

और दिशा का भेद अथवा विभाजन करना भ्रम है। कौन किसके पूर्व में स्थित है और कौन किसके पश्चिम का बोध कराता है- सब कुछ सापेक्ष है। बस, उसने कह दिया कि 'जब दो महान सुसंस्कृत व्यक्ति मिलते हैं, तब पूर्व और पश्चिम समाप्त हो जाता है।' (When two great men stand face to face, there is neither east nor west) भारतीय-संस्कृति के समाहार सामर्थ्य को लक्षित करते हुए ही कवि इकबाल ने लिखा था-

'इराक, मिश्र, रोम, सब मिट गये जहां से

बात कुछ है ऐसी, हस्ती मिटती नहीं हमारी।'

इस देश की सांस्कृतिक एकता की सुंदरता निहारते निगाहें कभी थकती नहीं हैं और इस 'सांस्कृतिक-एकता' को बनाये रखने में हमारी भारतीय रेल, जो दुनिया की वृहद रेल व्यवस्थाओं में से एक है, उसका महत्वपूर्ण योगदान है। हमारा देश भौगोलिक रूप से आकर्षक किंतु बहुत बड़ा देश है। इस भौगोलिक दूरी को पाटने एवं इनसे संबद्ध आयामों को एक सूत्र में पिरोये रखने में रेलवे का बहुत बड़ा योगदान है। भिन्न-भिन्न रंग-रूप, खान-पान और वेश-भूषा वाले भारत के इन राज्यों से रूबरू होना अपने आप में अजूबा है।

प्रसिद्ध अंग्रेजी लेखक फ्रांसिस बेकन ने अपने लेख 'ऑफ ट्रेवल' में लिखा है कि 'बचपन में की गयी यात्रा शिक्षा देती है तथा बड़े होने पर की गयी यात्रा अनुभव

बन जाती है।’

पंडित जवाहर लाल नेहरू ने ‘आल इण्डिया न्यूज पेपर एडिटर्स कॉन्फ्रेंस, नई दिल्ली को संबोधित करते हुए एक बार कहा था। हमारे देश से बड़ी संख्या में लोग विदेश जाते हैं, यह देखने कि वहां क्या हो रहा है, वहां की संस्कृति कैसी है। लेकिन कभी-कभी मुझे आश्चर्य होता है कि वे भारत भ्रमण करने और यहां क्या हो रहा है, इसे जानने में उतनी दिलचस्पी नहीं दिखाते हैं। वे दसियों हजार मील दूरी तय कर दूसरी जगह जाते हैं, किन्तु एक या दो हजार मील दूरी तय कर नहीं देखना चाहते कि भारत में क्या हो रहा है।’

उनकी बात आज भी बहुत हद तक सही है। हम अपने ही देश को अच्छी तरह नहीं जानते।

आज भारतीय-रेल परिवहन का एक ऐसा साधन है, जो हमें एक दूसरे की सभ्यता और संस्कृति को जानने में काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। स्मरण रहे कि वह एक रेलयात्रा वृत्तांत को गाँधी जी ही नहीं पूरी दुनिया आज तक नहीं भूल सकी है। जब गाँधी जी भारत आये तो इस विस्तृत देश की सभ्यता संस्कृति को जानने समझने के लिए उन्होंने रेल-यात्रा को ही अपना माध्यम बनाया तथा इस बात को भी स्वीकार किया कि संस्कृति एकता को बनाए रखने में रेलवे अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। अपनी रेल यात्रा को संजीदगी से लिखकर बी.बी.सी. के पूर्व दिल्ली संवाददाता ‘मार्क तुली’ भारत में काफी मान सम्मान पा रहे हैं। इन समस्त बातों को तब मैं ज्यादा अच्छी तरह समझ पाया जब अपनी पत्नी के साथ 24 नवम्बर, 2008 को खुद एक लम्बी यात्रा पर हावड़ा से

कन्याकुमारी गया। आरक्षण कोरामंडल एक्सप्रेस में था। 81 सय्यावाली इस गाड़ी में मेरा दोनों बर्थ नीचे का था। वाह! कम्पार्टमेंट में क्या अद्भुत नजारे थे- कोई तमिल था, कोई बंगाली। कोई मुसलमान तो कोई गोरखालैंड दार्जिलिंग से था। लग रहा था मानो सारी सांस्कृतिक-एकता समेटे हुए हमारी भारतीय रेल अपने आप में ‘गर्व’ महसूस कर रही थी। सच भी यही था। मेरे हाथों में एक पत्रिका थी, जो रेलवे बोर्ड नई दिल्ली से प्रकाशित ‘रेल राजभाषा’ थी। मैं एक कविता पढ़ने में मशगुल था, उसी का कुछ अंश नीचे उद्धृत है-

‘विकास का प्रतीक है रेल

भारतीयता का प्रतीक है रेल

बेहतर सुरक्षा की नीति है रेल

भारतीय संस्कृति की रीति है रेल

लोकतंत्र की पहचान है रेल

मातृभूमि की संतान है रेल

शांति का अग्रदूत है रेल

मित्रता की राजदूत है रेल

सुरक्षा, संरक्षा, समय-पालन का संगीत है रेल

मानवता, विश्वास, एकता, अखंडता की जीत है रेल

भारत देश की आन बान और शान है रेल

अनेकता में एकता की पहचान है रेल।’

इन पंक्तियों में मुझे पूरी सांस्कृतिक गरिमा एवं राष्ट्रीय-चेतना की अभिव्यक्ति दिखाई दे रही थी।

अचानक मेरी नजर खिड़की से बाहर गयी तो बस, देखता ही रह गया। चारों तरफ प्राकृतिक सौन्दर्य का अद्भुत नजारा था, जो मैंने पहले कभी नहीं देखा था। ट्रेन चल रही थी, ऐसा लगता था कि आस पास की

सभी चीजें, पेड़, बिजली के खंभे आदि भी इसके साथ दौड़ लगा रहे हैं। कभी-कभी तो पूरा ट्रेन इंजन से लेकर अन्तिम डिब्बे तक 'कर्व' आकार में दिख जाती थी तो ऐसा लगता था कि दुल्हन को नीली साड़ी में गोटा-जरी टांक दिया गया हो।

इतने में पैंट्रीकार से खाना आ गया। भोजन की थाली पूरी तरह से दक्षिण भारतीय थी। खाने में 'रसम' भी था। हमारे बर्थ के बगल में एक साथी पैसेंजर थे, जो तमिल थे। उन्होंने मुझे रसम बनाने की विधि भी बताई तथा 'तमिल' शब्दों की भी जानकारी दी। तमिल भाषा में 'मंदिर' को 'कोइल' कहा जाता है। 'किसमिस' को 'दराइच' तथा 'काजू' को 'मुंदरि' कहा जाता है। इसके अलावा और भी बहुत सी जानकारीयाँ मुझे अपने सहयात्री से मिली।

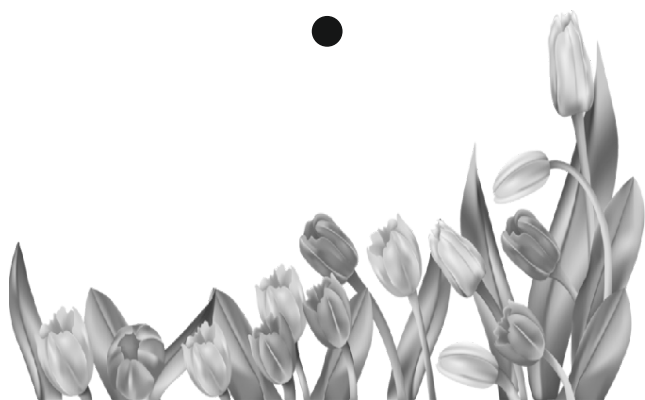
मुझे सहसा भारतीय रेल का मुख्य ध्येय 'वसुधैव कुटुम्बकम्' याद आ गया। मेरी अनुभूति इस बात को स्वतः प्रमाणित कर रही थी कि देश की एकता एवं अखंडता बनाये रखने में रेलवे कितनी सहायक सिद्ध हुई है। बात-चीत के नये-अवसर, संस्कृति का आदान प्रदान, भाषा का आदान-प्रदान, एक-दूसरे को जानने एवं समझने का मौका हमें रेल यात्रा के माध्यम से ही मिलता है। राहुल सांकृत्यायन और नागार्जुन की तरह जीवन के निर्धारित लक्ष्यों में यदि यायावरी को भी सम्मिलित कर लिया जाए तो हर यात्रा आनंददायक, अनुभवजन्य और स्मरणीय होगी। वैसे, मेरा मानना यह है कि हर उम्र एक अनुभव है और हर यात्रा एक प्रयोग है। हमारे भारतीय मनीषियों ने बहुत सोच समझकर ही अपने तीर्थ स्थानों को भारत के चारों दिशाओं में

स्थापित किया ताकि एक दिशा के यात्री दूसरी दिशा में जाकर वहाँ के निवासियों से संपर्क कर सकें। इससे हमारे राष्ट्रीय गौरव एवं स्वाभिमान के साथ-साथ सांस्कृतिक एकता भी जागृत होगी।

हमारी भारतीय रेल सांस्कृतिक-एकता को बनाये रखने में समर्थ एवं सशक्त संवाहिका है, साधन है, जो देश और विदेशों में बसे करोड़ों की संख्या में भारतीयों एवं भारतीय मूल के लोगों के बीच आत्मीयता को सीधे एक सूत्र में स्थापित करने और भारतीय-संस्कृति से निरंतर जोड़े रखने में एक कड़ी के रूप में कार्य करती है। इसी से हमारी भारतीय 'अस्मिता' की पहचान है।

हमारा भारत विभिन्न धर्म सम्प्रदाय रूपी पुष्पों का एक सुंदर गुलदस्ता है। इस गुलदस्ते के विभिन्न पुष्पों की अपनी अलग-अलग पहचान एवं अपनी सुगंध है, किन्तु सारी खुशबू का सम्मिश्रण लिए हुए इस गुलदस्ते से जो एक अनोखी महक निकलती है- उसका नाम है सांस्कृतिक एकता। आज हमारी भारतीय रेल इस एकता को बनाये रखने में सक्षम है।

उप मुख्य टिकट निरीक्षक
पूर्व मध्य रेल, दानापुर
मो.-9431948279



आनुवंशिक बीमारियां आवश्यक रूप से वंशानुगत नहीं होती

- हरेन्द्र सिंह



आनुवंशिक बीमारियों या वंशानुगत स्थितियों पर चर्चा करते हैं, तो अक्सर इन शब्दों के बीच भ्रम होता है। आखिरकार, 'आनुवंशिक' और 'वंशानुगत' दोनों ही हमारे डीएनए और हमारे आनुवंशिक मेकअप को संदर्भित करते हैं। हालाँकि, हमें आनुवंशिक और वंशानुगत के बीच अंतर करने की आवश्यकता है। क्योंकि दोनों शब्द जरूरी नहीं कि एक दूसरे के स्थान पर इस्तेमाल किए जा सकें। जबकि आनुवंशिक और वंशानुगत दोनों ही बीमारियाँ, हमारे डीएनए में उत्परिवर्तन द्वारा निर्धारित होती हैं, सभी आनुवंशिक बीमारियाँ परिवार की रेखा से आगे नहीं बढ़ती हैं। केवल वे बीमारियाँ ही वंशानुगत होती हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी फैलती हैं। सभी वंशानुगत बीमारियाँ आनुवंशिक होती हैं, लेकिन सभी आनुवंशिक बीमारियाँ वंशानुगत नहीं होतीं। इन दो अवधारणाओं के बीच अंतर को समझने के लिए, हमें पहले प्रत्येक की परिभाषाओं और विशेषताओं को देखना चाहिए। आनुवंशिक रोग वे विकृतियाँ हैं जो हमारे आनुवंशिक पदार्थ या डीएनए में परिवर्तन के कारण होती हैं। उत्परिवर्तन डीएनए प्रतिकृति में त्रुटि या पर्यावरणीय कारकों (जैसे सिगरेट का धुआँ या विकिरण के संपर्क में आना) के कारण हो सकते हैं। इस मामले में, रोग किसी भी उम्र में प्रकट हो सकता है।

आनुवंशिक रोग माता-पिता द्वारा अपनी संतानों को

प्रेषित किए जा सकते हैं या नहीं भी। वंशानुगत बीमारी आनुवंशिक सामग्री में उत्परिवर्तन के कारण होती है, जो माता-पिता से बच्चों में संचारित होती है। जबकि डीएनए में भी परिवर्तन होता है। यहाँ मुख्य विशेषता यह है कि बीमारी संचारित होती है, क्योंकि यह परिवर्तन जीव की सभी कोशिकाओं में मौजूद होता है, जिसमें जर्मलाइन कोशिकाएँ भी शामिल हैं। हम जानते हैं कि डीएनए एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संचारित होता है। इसलिए सवाल यह है कि कुछ आनुवंशिक बीमारियाँ वंशानुगत होने से कैसे बचती हैं। आनुवंशिक बीमारियाँ शरीर में जेनेटिक कॉड यानि डीएनए में असामान्यता के कारण होती हैं। आमतौर पर ये बीमारियाँ एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में फैलती हैं। कुछ मामलों में यह बीमारियाँ जन्म के समय ही दिखने लगती हैं, जबकि कुछ मामलों में, ये बाद में विकसित होती हैं। आनुवंशिक बीमारियों का मुख्य कारण जीनों में उत्परिवर्तन या गुणसूत्रों की संख्या में बदलाव हो सकता है। सही जीवनशैली और स्वस्थ रहने से आनुवंशिक बीमारियों से बचा जा सकता है। आनुवंशिक रोग उत्परिवर्तन से शुरू होते हैं। आनुवंशिक जानकारी में परिवर्तन स्वतः स्फूर्त रूप से होने वाले उत्परिवर्तन बहुत विविध रूप ले सकते हैं। आनुवंशिक कॉड में एक अक्षर के परिवर्तन से लेकर बहुत अधिक गुणसूत्रों के अस्तित्व तक जैसे डाउन सिंड्रोम के मामले में। हालाँकि, जीनोम में सभी भिन्नताएं व्यवस्थित रूप

से बीमारी का कारण नहीं बनती है। दो व्यक्तियों के जीनोम के बीच कई भिन्नताएं होती हैं जो 6 बिलियन न्यूक्लियोटाइड्स या जेनेटिक कॉड के अक्षरों में पाई जा सकती है, जो इसे बनाते हैं। यदि हम दो व्यक्तियों के जीनोम की यादृच्छिक रूप से तुलना करते हैं तो हमें 3.2 मिलियन अलग अलग 'अक्षर' मिल सकते हैं; जो केवल 0.01% की भिन्नता को दर्शाता है।

हम अक्सर वंशानुगत और/या आनुवंशिक और/या जन्मजात विकारों के बारे में सुनते हैं। दुर्भाग्य से, इन शब्दों को अक्सर भ्रमित किया जाता है या इससे भी बदतर, एक दूसरे के स्थान पर इस्तेमाल किया जाता है। एक वंशानुगत विकार निश्चित रूप से आनुवंशिक है। वास्तव में, इसे एक आनुवंशिक उत्परिवर्तन के कारण होने वाली बीमारी के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो माता-पिता से संतानों में फैलती है। इसके बजाय, 'जन्मजात' जन्म से मौजूद बीमारी को संदर्भित करता है। हालाँकि, यह निश्चित नहीं है कि जन्मजात विकार आनुवंशिक भी है और अगर आनुवंशिक है, तो यह वंशानुगत या संक्रामक भी है। इसलिए प्राथमिक वर्गीकरण वंशानुगत रोगों (सभी आनुवंशिक) और जन्मजात रोगों (सभी आनुवंशिक नहीं) में है। उदाहरण के लिए, विकृति सिंड्रोम जन्मजात रोग हैं क्योंकि वे जन्म से ही चिकित्सकीय रूप से स्पष्ट होते हैं (और

कभी-कभी अल्ट्रासाउंड के माध्यम से गर्भ में ही), लेकिन वे हमेशा वंशानुगत नहीं होते हैं। उदाहरण के लिए, प्रदूषकों या तथाकथित टेराटोजेनिक दवाओं के संपर्क में आने के कारण भ्रूण की विकृतियाँ गैर-वंशानुगत जन्मजात विकार हैं।

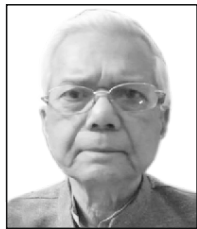
दूसरी ओर, म्यूकोपॉलीसेकेराइडोसिस, म्यूको-लिपिडोसिस और उपापचय मूल के सिंड्रोमिक रोग वंशानुगत जन्मजात विकारों के अध्याय के अंतर्गत आते हैं। ऐसे मध्यवर्ती मामले भी हैं जिनमें आनुवंशिक दोष होते हैं, जो अपनी विशेष उत्पत्ति के कारण, वंशानुगत के रूप में वर्गीकृत करने के लिए पूरी तरह से उपयुक्त नहीं हैं, क्लासिक उदाहरण: डे नोवो क्रोमोसोमल विकार। क्रोमोसोमल उत्पत्ति के विकृति सिंड्रोम डे नोवो क्रोमोसोमल विपथन के कारण होते हैं। यानी, माता-पिता में अनुपस्थित होते हैं, और ग्री या पोस्ट-जाइगोटिक क्रोमोसोमल पुनर्व्यवस्था घटनाओं के कारण होते हैं। इसलिए, जब तक कि गुणसूत्र दोष एक माता-पिता के शुक्राणु या अंडे की कोशिकाओं की एक निश्चित मात्रा में मौजूद न हो (जर्मिनल मोजेसीजम, जिसे निश्चितता के साथ बाहर करना असंभव है), इन सिंड्रोम को वंशानुगत के रूप में परिभाषित करना अनुचित है।

- फायर अधिकारी/प्रशासन
पर्व मध्य रेल/हाजीपुर



वृक्षों का महात्म्य

– डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह



वृक्ष प्रकृति का हरित-श्रृंगार है। स्वच्छता और स्वास्थ्य पर्यावरण का सचेतक है, पोषक है और सशक्त रक्षक भी है। प्राणवायु (ऑक्सीजन) के शुद्धिकरण का प्राकृतिक संयंत्र है। यही कारण रहा होगा कि भगवान श्रीकृष्ण ने 'गीता' में 'अश्वत्थ सर्व वृक्षाणां' कहकर स्वयं को पीपल कहा है। यजुर्वेद में कहा गया है- 'वनानां पतेय नमः, वृक्षाणां पतेय नमः, औषधीनां नमः अर्थात् वनों के पति को नमस्ते, वृक्षों के पति को नमस्ते, औषधियों के पति को नमस्ते। यहाँ वृक्षों और औषधियों के प्रति आदर-सत्कार की भावना का समर्थन किया गया है। वृक्ष के महत्व को रेखांकित करते हुए मत्स्य पुराण में भी कहा गया है कि- "दशकूप समावापी, दशवापी समोहदः दशहृद समः पुत्रो, दशपुत्र समोद्भुम" यानी दसकूओं के बराबर एक वापी (वाबड़ी), दस वापी के बराबर एक हृद (तालाब) दस हृद के बराबर एक पुत्र और दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष हुआ करता है। पृथ्वी पर अवस्थित वृक्ष को श्रेष्ठ देवता भी माना गया। यह हर प्रकार से शुद्ध और पवित्र स्थान है जहाँ भगवान और देवगण भी इसी पर अपना निवास मानते हैं। इसीलिए कठोपनिषद की कंडिका में कहा गया है- "मूले ब्रह्मा, त्वचा, विष्णु सारगयाम्/पते पते देवनाम वृक्षराज नमस्तुते" अर्थात् जड़ों पर ब्रह्मा, त्वचा यानी छाल पर विष्णु, शाखा पर

महेश तथा समस्त पत्तों पर अन्य देवताओं का प्रिय आवास रहता है। वृक्षराज पीपल को कहा गया है। अथर्ववेद में - "अश्वत्थः देवसदनः" यानी पीपल वृक्ष ही देव सदन है, ब्रह्म स्थान है। श्रीमद्भागवत में वर्णित है कि द्वापर युग में परमधाम जाने से पूर्व योगेश्वर श्रीकृष्ण इसी दिव्य वृक्ष पीपल के नीचे बैठकर ध्यान में लीन हुए। इसी प्रजाति के एक वृक्ष के नीचे गौतम बृद्ध को ज्ञान मिला। अन्य शास्त्रों में भी वर्णित है कि "अश्वत्थः पूजिते यत्र पूजिताः सर्वे देवताः" अर्थात् पीपल की सविधि पूजा-अर्चना करने से सम्पूर्ण देवतागण स्वयं ही पूजित हो जाते हैं। पीपल वृक्ष लगाने वाले की वंशपरम्परा कभी विनष्ट नहीं होती। महाभारत में भी एक सूक्ति है- "पूष्पैः सुरगणान वृक्षाः फलैश्चापि तथा पितृन्/छायया चार्तिथ तात् पूजयन्ति महीरुहाः" अर्थात् वृक्ष फूलों से देवता की, फलों से पितरों की और छाया से अतिथि एवं पथिक का सत्कार करते हैं।

इस तरह वेदों में, पुराणों में उपनिषदों में और विभिन्न संहिताओं में अर्थात् समस्त वैदिक साहित्यिक ग्रंथों में वृक्ष के जीवनदाता, औषधीय एवं मंगलकारी रूप का वर्णन मिलता है। विशेषकर आयुर्वेद में यह वर्णित है कि पुनीत धरती पर कोई भी वृक्ष, कोई भी वनस्पति बिना औषधीय गुण के नहीं है। पर्यावरण-प्रदूषण का मापदण्ड तुलसी का पौधा माना जाता है। इस संदर्भ में

यह उल्लेखनीय है कि जिस घर-आँगन में तुलसी का पौधा बार-बार सूख या मर जाता है तो समझा जाता है कि वह घर-आँगन का पर्यावरण प्रदूषित होता है। वृक्ष मौसम का भी सूचक है। वैज्ञानिक अन्वेषण और विश्लेषण ने भी यह साबित कर दिया है कि वृक्ष एवं अन्य वनस्पतियाँ हमारी तरह जीवनधारी हैं। इसे काटना या सुखा देना कोई हल्का अपराध नहीं है, बल्कि वृक्ष काटना एक प्रज्ञा अपराध जैसा है। संक्षेप में ध्यातव्य होना चाहिए कि वृक्ष मौसमी अनुकूलता को कायम रखने में समर्थ है। वृक्ष के उक्त वैदिक और वैज्ञानिक महात्म्य के आलोक में और वर्तमान में उसके प्रति भौतिकवादी प्रवृत्तियों के परिप्रेक्ष्य में यह कहना उचित होगा कि मानव जीवन को प्राणवायु देनेवाले वृक्षों के बारे में हमारी पीढ़ी की जानकारी निरन्तर सीमित होती जा रही है। कैसी विडम्बना है कि मानव जीवन को सौंदर्य की अनुभूति से भर देने वाली वृक्ष-सम्पदा दिनों दिन उपेक्षित होती जा रही है। हमारी तथाकथित विकास की योजनाओं का पहला प्रहार वृक्षों और वनसम्पदा को झेलना पड़ रहा है। वैश्विक तापन की विकरालता और जलवायु परिवर्तन की प्रतिकूलता के मुख्य कारण जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में वृक्षों का संरक्षण और संवर्द्धन नहीं के बराबर है, जबकि एक व्यक्ति के लिए कम से कम सोलह वृक्षों की आवश्यकता होती है। सौम्य, सुन्दर और स्वच्छ पर्यावरण के लिए भूतल का तैतीस प्रतिशत भाग वृक्षाच्छादित होना अनिवार्य है।

हम जीवित हैं क्योंकि इस भूतल पर वृक्ष है जो वातावरण के कलुष को विषपायी नीलकण्ठ शिव की तरह आत्मसात करके इस भूतल को रहने योग्य बनाये रखते हैं। भूतल के क्षरण को रोकते हैं, वर्षा लाते हैं, सौन्दर्यानुभूति की प्रेरणा बनते। पर्यावरणविदों की चेतावनी को चाहे नकार भी दें, पर जीवन में सत्य, शिवं ओर सुन्दरम की प्रतिस्थापना करने वाले वृक्षों को हम बिल्कुल नहीं भूलें। नहीं तो आनेवाली पीढ़ी आर्तस्वर में यही कहेगी-

“यथा पल्लवपुष्पाद्या यथा पुष्पफलद्वयः।

यथा फलद्विस्वारोहा हा मातः क्वागमन् दुमाः॥”

अर्थात् पत्तों के समान ही प्रचुर पुष्प होते थे और पुष्प के समान ही उनमें प्रचुर फल लगते थे, और प्रचुर फलों से लदे होने पर भी जो सरलता से चढ़ने योग्य होते थे, हे माता पृथिवी! बता वे वृक्ष अब कहाँ गए?

- ओ/50, डॉक्टर्स कॉलोनी
कंकड़बाग, पटना-800020
मो.नं.- 8863045716



आरसी प्रसाद सिंह : लीक से हटकर चलनेवाला बंजारा कवि

- ज्वाला सांध्यपुष्प



हिंदी और मैथिली साहित्य के जाज्वल्यमान सितारे की तरह अपनी लेखनी की रोशनी से साहित्य-संसार को दीप्त करते रहनेवाले कविवर आरसी प्रसाद सिंह ने बिहार की इस सांस्कृतिक-साहित्यिक धरा को अपने साहित्यिक अवदानों से इतना सिंचित किया कि इनके नाम का डंका पूरे देश में बज गया। यह वह जमाना था जब देश परतंत्र था; यहां की जन भावनाएं अंग्रेजों की गुलामी के खिलाफ आंदोलनरत रहती थी। काव्य क्षेत्र में छायावाद की बरगदी छाया से तत्कालीन हिंदी साहित्य पूरी तरह आच्छादित था जहां प्रसाद, पंत निराला और महादेवी के लेखन के समक्ष किसी का टिकना आसान न था। उस पथरीली राह पर कवि आरसी प्रसाद सिंह ने अपनी दिव्य रचनाओं की प्रस्तुति कर, प्रगतिशीलता के गीत गाकर अपनी नयी पहचान बनाई और साथ में कविता के नये-नये प्रतिमान गढ़े। इन्हें किसी के पीछे चलना या किसी का अनुसरण करना गवारा नहीं था। अध्ययनशीलता इनकी पूंजी थी जिसके बल पर इन्होंने अपनी नवीन शैली की निर्मिति की। 'लीक छाड़ि तीन ही चलै शायर, सिंह, सपूत' की मानिंद इन्होंने एक-से-एक लाजवाब काव्यात्मक मोतियों से हिंदी साहित्य की झोली भरी जिससे इनका साहित्यिक व्यक्तित्व स्वतः निखरता गया। इनकी अद्भुत प्रतिभा को देख 'युवक' के संपादक रामवृक्ष बेनीपुरी जी ने भी इन्हें खूब प्रेरित किया और सही मायने में बागमती के तट का यह तत्कालीन युवा कवि बागमती -सा ही अल्हड़, मस्त और मन-मिजाजी बना रहा, कभी किसी सीमा में बंधा नहीं; किसी की जी-हुजूरी नहीं की। वे जहां भी रहे अपने हिसाब से जीते रहे। धन की चिंता किए बगैर लेखन के अमर बेल के सहारे उर्ध्वगमन करते रहे। अपने जीवन में अध्यापकी, आकाशवाणी आदि की नौकरी करते हुए भी इन्होंने अपनी स्वाभाविकता नहीं छोड़ी, स्वाभिमान के खिलाफ

समझौता नहीं किया भले ही इन्हें नौकरी छोड़ देनी पड़ी। इनकी इसी मौलिकता ने इन्हें एक विशिष्ट साहित्यकार की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया।

अपने विविध आयामी लेखन से अपनी काव्यात्मक प्रतिभा निखारनेवाले इस अद्भुत महाकवि ने प्रसाद की तरह आंसू नहीं बहाए, महादेवी वर्मा की तरह किसी आराध्या के प्रति तिल-तिलकर जले नहीं बल्कि इनमें तो कबीर का अक्खड़पन और फक्कड़पन, सूर की भक्ति और वात्सल्य, पंत का प्रकृति प्रेम, नेपाली की देशभक्ति आदि समाहित रही। छायावाद काल के होकर भी ये छायावादी नहीं रहे। समष्टि की पीड़ा से प्रभावित कवि आरसी ने कभी व्यक्तिनिष्ठ कविताएं न कीं। छायावाद या छायावादेतर काल में तीन बिहारी कवियों के नाम बड़ी शिद्दत से शुमार किए जाते हैं। मगर आरसी बाबू न छायावादी रहे, न ही हम उन्हें छायावादेतर कवि कह सकते हैं। बल्कि ये एक ऐसे छायावादेतर कवि हैं जिन्होंने प्रेम, सौंदर्य, ऐश्वर्य, प्रकृति, मस्ती और यौवन के चित्र खींचने में जरा भी संकोच न किया बल्कि सुंदरता और प्रकृति में भी इन्हें ईश्वर की आत्मा दिखाई पड़ी।

किसी भी व्यक्ति के जीवन की तीन अवस्थाएं होती हैं बचपन, जवानी और बुढ़ापा। उसी तरह कवियों की काव्य-यात्रा में भी तीन पड़ाव आते हैं। और आरसी बाबू के कृतित्व के साथ भी ऐसा ही होता है कि प्रारंभ में वे बाल-साहित्य के प्रति ज्यादा लगाव रखते थे, उसके बाद वे सौंदर्य, प्रकृति और ऐश्वर्य के कवि हो गए तो अंतिम पड़ाव पर आकर वे कवि कोकिल विद्यापति की मानिंद ईशभक्ति की धारा में डूबते चले गए।

'कलापी' उनके प्रकृति-प्रेम और सौंदर्य की परिणति है तो 'संजीवनी' खंडकाव्य राष्ट्रप्रेम की सफल अभिव्यक्ति; 'युद्ध अवश्यभावी है' और 'मैं किस देश में हूँ' राष्ट्रीयता के प्रति कठोर उद्घोष है, वहीं 'नंददास' और 'भूखे हैं भगवान देश देश के' आदि इनके भगवद्भक्ति में निहित होने की अंतर्कथा है।

बहुमुखी प्रतिभा और काव्य-सर्जना के जादूगर कवि आरसी बाबू ने कविता, कहानी, निबंध, साक्षात्कार, बाल साहित्य आदि विषयों और विधाओं में आकंठ डूबकर लेखन किया जिनकी प्रारंभिक कविता 'जीवन का झरना' ने तो इतनी ख्याति अर्जित की कि यह हरेक काव्यप्रेमी की जिह्वा पर आज भी तैरती दिखाई पड़ती है-

'यह जीवन क्या है, निर्झर है, मस्ती ही इसका पानी है
सुख-दुःख के दोनों तीरों से, चल रहा राह मनमानी है।
बांध के रोड़ों से लड़ता, वन के पेड़ों से टकराता
बढ़ता चट्टानों पर चढ़ता चलता यौवन से मदमाता।
लहरें उठती हैं गिरती हैं, नाविक तक पर पछताता है।
तब यौवन बढ़ता है आगे निर्झर बढ़ता ही जाता है।
चलना है केवल चलना है, जीवन चलता ही रहता है।
रुक जाना है मर जाना ही, निर्झर यह झड़कर कहता है।'

आज के दौर में हम प्रकृति संरक्षण की बातें बड़ी शिद्दत से करने लगे हैं जब हमें चोट लगी है। मगर कवि आरसी प्रसाद सिंह ने प्रकृति के फायदों से परिचित कराते हुए कहा कि पेड़-पौधों के अभाव में मानव अपने हिस्से आनेवाले धुओं और धूलों से अपना विनाश करेगा, जिसकी चिंता उन्होंने अपनी 'गरल घूंट' कविता में व्यक्त की है:-

बाज आए, लो शहर, सरकार दामों
कल तुम्हारी यह गली हम छोड़ देंगे।
यह धुआं यह धूल तुमको हो मुबारक
हम जियें भी, तो यहां दम तोड़ देंगे।'

तो इसी कविता में वे अपने छद्म मित्रों पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं:-

कौन माने, मृत्यु के हाथों नहीं हम
जिंदगी की मार से मारे हुए हैं।
यह किसे अहसास होगा, शत्रुओं से
हम न हारे, मित्र से हारे हुए हैं।'

तो उनकी 'नई दिशा' कविता में उनकी मौज और मस्ती की तस्वीर ऐसे झांकने लगती जैसे पिंजरे में कैद कोई बुलबुल बाहर की दुनिया से रू-ब-रू होने की कामना में चहचहाने को उद्यत हो उठा हो-

'जब आती है मौज किसी की
मैं तस्वीर सजा देता हूं।
जब उमंग उठती है
मैं जंजीर बजा देता हूं।

शीर्षक कविता में वे ईश्वरीय प्रेम के गायक बन जाते हैं। देखें:-

एक मात्र है द्वार प्रेम का. प्रभु मंदिर का
प्रेम लुटाकर शेष ही फिर बचता है।
राम भक्ति की कनक-कसौटी काम भक्ति है
कैसे पचे रसायन, पानी जिसे न पचता है।
प्रेम न होगा, तो फिर हाथ न कुछ भी होगा
माया भी न मिलेगी और न राम मिलेगा
दुविधा में रह जाओगे, भव भार बनोगे
शांति नहीं, सुख नहीं; नहीं विश्राम मिलेगा।'

इस तरह हमने देखा कि हिंदी साहित्य का यह महान कवि अपनी विविध प्रकार लेखन और अपने रहने सहने की विचित्रता और विशिष्टता के कारण अपनी अलग पहचान बनाते रहे। अक्खड़ कबीर की भांति उन्होंने कभी किसी के आगे हाथ पसारने की बात तो दूर अपनी कोई लघु चाह भी न रखी, कहीं किसी से भी कोई समझौता नहीं किया बल्कि सदांनीरा बागमती की अल्हड़ धाराओं की भांति बहते-चलते में ही विश्वास किया। कहीं किसी के कर से एक लोटा भी जल पीने की तनिक भी इच्छा प्रकट न की। सचमुच वे एक निःस्वार्थ बंजारे के-से थे जिन्हें किसी स्थान पर टिकना पसंद न था। बस, साहित्य-साधना ही जिनका परम लक्ष्य था भले ही उन्हें किसी का एहसान पाना उन्हें गवारा न था। तभी तो उन्हें आकाशवाणी लखनऊ के सहायक निदेशक पद से त्यागपत्र देने में उस वक्त थोड़ी भी हिचकिचाहट न हुई और वे आकाशवाणी की सेवा छोड़कर ट्रेन से पटना के लिए रवाना हो गए और रास्ते में एक लंबी कविता लिख डाली जिसमें उनका स्वाभिमान सिंह की भांति गरज रहा है:-

अभी कुछ दूर चल और नाव लेकर
न जाने किधर से बुलावे किनारा....
अभी संतरण के बहुत हैं ठिकाने
किसी घाट का जल नहीं पी सकूंगा
किसी देवता की कृपा के बिना भी
स्वयं सिद्ध जीवन सहज जी सकूंगा।'

ऐसे महाकवि को सादर नमन!

- पूर्व बैंक अधिकारी एवं संयोजक:

परंपरा, शाहपुर

पटोरी, समस्तीपु-848504

ईमेल: jwalasandhyapushpa@gmail-co

मोबाइल में उलझता बाल मन

- नवीन कुमार



आज का वर्तमान समय सोशल मिडिया का है। वर्तमान समय में सारे संसार की जानकारी एक छोटे से बक्से में सिमट कर रह गई है। छोटे बक्से का चमत्कार ऐसा कि बड़े हो या बच्चे सभी लोग इसके मकड़जाल में धीरे धीरे उलझते चले जा रहे हैं। उस बक्से का नाम है-मोबाइल।

आमतौर पर यह देखा जा रहा है कि छोटे बच्चे बड़ों को देखकर मोबाइल के आदी हो रहे हैं। बच्चों में मोबाइल के उपयोग की प्रवृत्ति जिस प्रकार बढ़ती जा रही है वह चिंताजनक है। वैज्ञानिक आधार पर यह माना गया है कि मोबाइल के ज्यादा इस्तेमाल से बच्चों के स्वास्थ्य पर खराब प्रभाव पड़ रहा है। मोबाइल के अंदर से रेडियेशन की तरंगें बच्चों के साथ-साथ बड़ों के लिए भी हानिकारक है। इसके इस्तेमाल से बच्चों के तंत्रिका तंत्र पर खराब असर होने लगता है और धीरे-धीरे उनके कार्य करने की क्षमता घटने लगती है, जैसे- उनका हंसना, पढ़ना, चलना, घूमना, खेलना इत्यादि। स्वास्थ्य विशेषज्ञ ने बताया है कि रेडिएशन कैंसर की नींव भी रख रहा है। एक अन्य प्रभाव देखा जा रहा है कि बच्चों के क्रमिक विकास में रूकावट हो रही है। मोबाइल में हर समय उलझे बच्चे न तो पारिवारिक माहौल में सही ढंग से घुल-मिल रहे हैं और न ही सामाजिक क्रियाकलाप से जुड़ पा रहे हैं। ज्यादा फोन के इस्तेमाल से बच्चों में सिर दर्द की शिकायत हो रही है और उनकी आंखों पर भी चश्मे चढ़ने लगे हैं। सवाल है कि आखिर, बच्चों की मोबाइल लत के पीछे जिम्मेवार कौन है? आमतौर पर देखा जा रहा है कि अधिकांश माता-पिता अपने बच्चे को अधिक प्यार-दुलार के चलते आधुनिकता से लैस करने की चाहत में जरा भी कंजूसी नहीं करते। कुछ माता-पिता

सोचते हैं कि बच्चे के हाथ में फोन देने से उसका मानसिक विकास तेजी से होगा और वह ज्ञान ग्रहण करने में शीघ्र समर्थ हो सकेगा।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने मोबाइल तकनीक का उपयोग करने वाले बच्चों से जुड़े जोखिम को भी पहचानना शुरू कर दिया है। संगठन के प्रारंभिक सुझाव बता रहे हैं कि दो से चार वर्ष तक के बच्चों को एक दिन में एक घंटा, चार वर्ष से अधिक उम्र वालों को सिर्फ दो घंटे फोन का उपयोग करना ही उचित है। एक शोध के अनुसार सात से सोलह के अधिकांश बच्चे जिन्होंने स्मार्टफोन में अधिक समय बिताया था, तिरछी नजर की त्रुटि के साथ मोटापे के भी शिकार हो रहे हैं। देश में मोबाइल फोन में लिप्त बच्चों के सर्वेक्षण सांख्यिकी चौकाने वाले हैं। बच्चों में मोटापे की अप्रत्याशित वृद्धि हो रही है। वर्तमान में करीब एक करोड़ पैंतालीस लाख बच्चे इसके शिकार हैं, जबकि वर्ल्ड ओवेसिटी फेडरेशन का कथन है कि 2030 तक 2.8 करोड़ बच्चे मोटापे की बीमारी से पीड़ित हो सकते हैं। दूसरी चिंताजनक समस्या बच्चों की नींद की है जिसके आंकड़े बता रहे हैं कि 64 प्रतिशत किशोर 10 घंटे की जगह मात्र 6 घंटे सो रहे हैं। अध्ययन से पता चला है कि मोबाइल फोन के इस्तेमाल से पढाई का तनाव, अवसाद और पारिवारिक सामंजस्य की समस्या भी पाई गई है। इन विकट परिस्थितियों से देश के नौनिहाल को कैसे रास्ते पर लाया जाए, यह भी विचार किया जाना चाहिए। मेरी समझ से सर्वोत्तम उपाय यही नजर आ रहा है कि माता-पिता तथा परिवार के सदस्यों को बच्चों के सामने मोबाइल का उपयोग कम से कम करना चाहिए। बच्चों को दैनिक दिनचर्या के बाद परिवार के कोई एक सदस्य घर से बाहर जैसे पार्क में या खेल के मैदान में प्रतिदिन नियम बनाकर बाहर ले जाने की आदत डालनी चाहिए जिससे वे अपने शरीर

को नियमित कार्य में लगा सके तथा अपने उम्र के बच्चों के साथ खेलने की आदत भी डालनी चाहिए। इससे इन्हें लोगो से मिलने जुलने का अवसर भी मिलेगा तथा सामाजिक बंधन में वे बंध सकेंगे।

बच्चों को बचपन से ही संगीत, नृत्य, खेलकूद तथा अन्य मनोरंजक कार्य की तरफ प्रेरित कर उसे सही दिशा में लगाया जाना चाहिए। साथ ही अभिभावक को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि किसी भी हालत में मन को बहलाने में फोन का इस्तेमाल नहीं करने देना है। फोन की जगह खिलौने या मनोरंजक पुस्तकें देकर बच्चों के मन को दूसरी तरफ मोड़ना चाहिए। अगर घर में दादा-दादी या नाना-नानी हैं तो बच्चे को मनोरंजक कहानियाँ सुनानी चाहिए। लेकिन आज के एकल परिवार में यह संभव दिखाई नहीं पड़ रहा है। बच्चों को प्रकृति की कहानियाँ तथा देश भक्त बालकों की

कहानियाँ सुनाकर उसके मन को मोबाइल की तरफ से ध्यान अलग रखना चाहिए।

आज के विज्ञान ने अधिक से अधिक उपकरणों को जनमानस के हित में प्रस्तुत किया है। उन्हीं उपकरणों का उपयोग करके बालक के मन को और अधिक समृद्ध बनाने की कोशिश करना नितांत आवश्यक है। जरूरत इस बात की भी है कि मोबाइल फोन मुहैया कर साकारात्मक पक्ष से बाल मन को जोड़ते हुए बच्चों को समुचित वातावरण देकर कोमल मन मस्तिष्क के भटकाव से रोका जा सके।

निजी सचिव-॥

महाप्रबंधक/इंजी. हाजीपुर

मो.- 9771463226

कविता

सिन्दूर का शौर्य

- वैष्णवी परमार



सूरज की किरणों में लिपटी थी वादी,
पहलगाम की फिज़ा थी आधी।
अचानक हवा में घुला बारूद,
मासूमों पर टूटा आतंकी प्रलय-रुद्र।
हँसते-खिलखिलाते सैलानी वादियों की

बाँहों में आए थे,
फूलों की खुशबू, झरनों की ठंडक में पल दो पल सुकून पाए थे।
पर तभी अचानक गोलियाँ गूँजी, कांप उठा हर मंजर,
जहाँ मुस्कानों की गूँज थी कल तक, आज था मातम का मंजर।
चीखें लहरों से टकराई थी,
आँखें सहमी-सहमी सी पाई थी।
लेकिन हम वो हैं जो टूटते नहीं
आँसू छुपा के भी झुकते नहीं।
वार करे मासूमों पर नीच,
उसे खोज निकालते हैं सीमा खींच।
ऑपरेशन सिन्दूर-नाम नहीं, प्रतिज्ञा थी,

हर गोली में एक सिपाही का धैर्य था।
घाटी ने देखा सिंहों का आगमन,
जिससे कांपा आतंक का हर नापाक मन।
जो सोचे थे डर से हम छिप जाएंगे,
अब खुद की कब्र वो खुद ही खोद आएंगे।
ये खून नहीं, सिन्दूर बना,
भारत माँ का सौभाग्य बना।
शहीदों की चिताओं से निकली लौ,
कहती है- मत छेड़ों हमें वरना राख बना दें।
अब वादी बोले, पहलगाम गाए,
वीरों का देश कभी झुक न पाए।
जहाँ गिरे वो वहीं फूले चमन,
'जय हिंद' के स्वर में गूँजा हर मन।

पुत्री- श्री प्रवीण कुमार सिंह
मुख्य कर्मचारी एवं कल्याण निरीक्षक
पूमरे/महेन्द्रघाट/पटना

नई शिक्षा नीति

- संजय ठाकुर



पृष्ठभूमि:- शिक्षा का शाब्दिक अर्थ होता है सीखने और सिखाने की प्रक्रिया परन्तु इसके व्यापक अर्थ को देखें तो शिक्षा किसी भी समाज में निरंतर चलने वाली

सामाजिक प्रक्रिया है जिसका व्यापक उद्देश्य होता है। शिक्षा के बहुआयामी महत्ता को सुस्पष्ट करते हुए संस्कृत के यशस्वी कवि भर्तृहरि ने अपने नीतिशतक में लिखा है कि-

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकम्, प्रच्छन्नगुप्तं धनम्
विद्या भोगकारी यशः सुखकारी, विद्या गुरुणाम् गुरुः।
विद्या बंधुजनो विदेश गमने, विद्या परं दैवतम्।
विद्या राजसु पूज्यते न हि धनं, विद्या विहीनः पशुः॥

इससे साफ ध्वनित होता है कि हमारे पूर्वजों ने धन के ऊपर शिक्षा को स्वीकार कर भारतवर्ष की संस्कृति और सभ्यता में ज्ञान और विवेक के मूल्यवान तत्वों की दृढ़मूल प्रतिष्ठा की है। यह अनायास नहीं है कि प्राचीन भारत में नालंदा, तक्षशिला और वल्लभी जैसे विश्व-प्रतिष्ठा के शिक्षण-संस्थानों की उपलब्धता थी।

परिचय:- बदलते वैश्विक परिदृश्य में ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं की पूर्ति करने तथा शिक्षा की गुणवत्ता, नवाचार और अनुसंधान को बढ़ावा देने हेतु मौजूदा शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता थी।

भारतीय शिक्षण व्यवस्था की वैश्विक स्तर पर पहुँच सुनिश्चित करने के लिये प्राचीन विद्याध्ययन की व्यवस्था को आधार मानकर इसरो प्रमुख डॉ.

कृष्णस्वामी कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में नई शिक्षा नीति का मसौदा तैयार किया गया जिसे मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा शिक्षाविदों, जनता और हितधारकों के साथ व्यापक परामर्श के बाद 29 जुलाई 2020 को नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति को मंजूरी दी गई। नई शिक्षा नीति की घोषणा के साथ ही मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम बदल कर शिक्षा मंत्रालय कर दिया गया है।

नई शिक्षा नीति औपनिवेशिक मानसिकता को दूर कर स्वाभिमान और आत्मनिर्भर समाज की निर्मिति का सूत्रपात है। भारत के समेकित विकास को अभीष्ट मानते हुए इस नीति के मूल में परिवर्तनशील भारतीय समाज के लिये शाश्वत मूल्यों पर आधारित राष्ट्रीय शिक्षा की संकल्पना को साकार करने का संकल्प निहित है।

उद्देश्य:- नई शिक्षा नीति का उद्देश्य जैविक प्राणी से सांस्कृतिक प्राणी में रूपांतरित ऐसे मनुष्य का निर्माण है जो 21वीं सदी की चुनौतियों का सामना करने में सक्षम हो सके एवं संविधान द्वारा प्रदत्त न्याय, स्वतंत्रता, समता और बंधुता के मूल्यों पर आधारित समावेशी और बहुलतावादी समाज के निर्माण में श्रेष्ठ तरीके से अपना योगदान प्रस्तुत करते हुए भारत को विश्वगुरु बनाने के स्वप्न को साकार कर सके।

स्कूली शिक्षा संबंधी प्रावधान:- नई शिक्षा नीति में 5+3+3+4 पैटर्न पर आधारित है जिसके अनुसार छात्र की शिक्षा अलग-अलग चरणों में पूरा किया जाना है जो 3 से 18 वर्ष की आयु वाले बच्चों को शामिल करता है।

मूलभूत चरण-प्री प्राइमरी स्कूल या आंगनबाड़ी

के 3 साल, इसके बाद प्राथमिक विद्यालय में कक्षा प्रथम एवं द्वितीय। इसमें 3-8 वर्ष की आयु के बच्चे शामिल होंगे।

प्रारंभिक चरण-कक्षा 3 से 5, जिसमें 8-10 वर्ष की आयु के बच्चे शामिल हैं। यह छात्रों को गणित, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, कला और मानविकी के विषयों से परिचित कराएगा।

मध्य चरण-कक्षा 6 से 8 जिसमें 11 से 13 वर्ष की आयु के बच्चे शामिल होंगे। यह छात्रों को गणित, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, कला व मानविकी के विषयों से परिचित कराएगा।

माध्यमिक चरण-इस चरण में 14-18 वर्ष की आयु के बच्चे को कवर करते कक्षा 9 से 12 शामिल हैं इसके दो भाग हैं: कक्षा 9 से 10 तथा दूसरा 11 से 12। इन चार वर्षों के अध्ययन का उद्देश्य गहराई और आलोचनात्मक सोच के साथ बहु-विषयक अध्ययन को शामिल करना है।

पाठ्यक्रम और मूल्यांकन संबंधी सुधार:- प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष में परीक्षा आयोजित करने के बजाय स्कूल छात्र कक्षा 3, 5 और 8 में केवल तीन परीक्षाओं में शामिल होंगे। कक्षा 10 और 12 के लिए बोर्ड परीक्षाएं आयोजित की जाती रहेंगी लेकिन इन्हें फिर से डिजाइन किया जाएगा। इसके लिए मानक एक मूल्यांकन निकाय, परख द्वारा स्थापित किए जाएंगे। परीक्षा में दो भाग वस्तुनिष्ठ एवं वर्णनात्मक होंगे तथा परीक्षा वर्ष में दो बार आयोजित की जाएगी।

भाषायी विविधता का संरक्षण:- नई शिक्षा नीति का एक अनूठा पक्ष इसके भाषा संबंधी प्रावधान और उसके अनुप्रयुक्त आयाम हैं। मातृभाषा में शिक्षा और उनके संरक्षण की चिंता इनमें से एक है।

शारीरिक शिक्षा:- विद्यालयों में सभी स्तरों पर छात्रों को बागवानी, योगाभ्यास, खेल-कूद, नृत्य, मार्शल आर्ट्स को स्थानीय उपलब्धता के अनुसार प्रदान की जाएगी।

उच्च शिक्षा:- यह कई निकास विकल्पों के साथ स्नातक कार्यक्रम में 4 वर्षीय बहु-विषयक स्नातक की डिग्री का प्रस्ताव करता है। इनमें पेशेवर और व्यावसायिक क्षेत्र शामिल होंगे और इन्हें नियमानुसार लागू किया जाएगा:-

- 1 वर्ष का अध्ययन पूरा करने पर एक प्रमाण पत्र
- 2 साल की पढ़ाई पूरी करने के बाद डिप्लोमा
- 3 साल के कार्यक्रम के पूरा होने पर स्नातक की डिग्री
- 4 साल की बहुविषयक स्नातक डिग्री (पसंदीदा विकल्प)

दिव्यांग बच्चों हेतु प्रावधान:- इस नीति में दिव्यांग बच्चों के लिए प्रशिक्षण, संसाधन केन्द्र, आवास, सहायक उपकरण, प्रौद्योगिकी आधारित उपकरण, शिक्षकों का पूर्ण समर्थन एवं प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक नियमित रूप से स्कूली शिक्षा प्रक्रिया में भागीदारी सुनिश्चित करना आदि प्रक्रियाओं को सक्षम बनाया जाएगा।

डिजिटल शिक्षा से संबंधित प्रावधान:- नई शिक्षा नीति में वर्चुअल कक्षाओं के माध्यम से संगीत, कला, खेल-कूद, शिल्प जैसे विषयों से संबंधित गतिविधियों के अधिकाधिक समावेश को सुनिश्चित कर विद्यालयी पाठ्यचर्या को समृद्ध तथा विद्यालय शिक्षा को आनंदमयी बनाने पर बल देती है।

नई शिक्षा नीति में बहुत ही उत्तम रूप से आर्थिक विषमता का शिक्षा पर प्रभाव न हो, इसके निदान की

व्यवस्था की गई है। यह एक ऐसा नीति दस्तावेज है जिसमें डीजीपी का 6% भाग शिक्षा पर व्यय किए जाने का प्रस्ताव किया गया है। इस नीति में यह बार-बार ध्वनित किया गया है कि शिक्षा को केवल सरकार के भरोसे नहीं छोड़ना है इसलिए यह सामाजिक प्रतिभाग को बढ़ाने पर केन्द्रित है।

नई शिक्षा नीति की चुनौतियाँ

1. राज्यों का सहयोग:- शिक्षा एक समवर्ती विषय होने के कारण अधिकांश राज्यों के अपने स्कूल बोर्ड हैं इसलिए इस फैसले के वास्तविक कार्यान्वयन हेतु राज्य सरकारों को सामने आना होगा।
2. महँगी शिक्षा:- नई शिक्षा नीति में विदेशी विश्वविद्यालयों में प्रवेश का मार्ग प्रशस्त किया गया है। कई शिक्षाविदों का मानना है कि विदेशी विश्वविद्यालयों के प्रवेश से भारतीय शिक्षण व्यवस्था के महँगी होने की आशंका है।
3. शिक्षा का संस्कृतिकरण:- दक्षिण भारतीय राज्यों का आरोप है कि 'त्रि-भाषा' सूत्र से सरकार शिक्षा का संस्कृतिकरण करने का प्रयास कर रही है।
4. फंडिंग संबंधी जाँच का अपर्याप्त होना:- कुछ राज्यों में अभी भी शुल्क संबंधी विनियमन मौजूद है लेकिन ये नियामक प्रक्रियाएं असीमित दान के रूप में मुनाफाखोरी पर अंकुश लगाने में असमर्थ हैं।
5. वित्त पोषण:- वित्तपोषण का सुनिश्चित होना इस बात पर निर्भर करेगा कि शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय के रूप में जीडीपी के प्रस्तावित 6% खर्च करने की इच्छाशक्ति कितनी सशक्त है।

6. मानव संसाधन का अभाव:- वर्तमान में प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में कुशल शिक्षकों का अभाव है, ऐसे में नई शिक्षा नीति के क्रियान्वयन में व्यावहारिक समस्याएँ भी हैं।

7. बच्चों को संरचनात्मक तरीके से सीखने के अधीन किया गया है जिससे उनके छोटे दिमाग पर बोझ बढ़ सकता है।

उपरोक्त चुनौतियों के बावजूद नई शिक्षा नीति का उद्देश्य पाक-साफ है। दशकों से चली आई शिक्षा व्यवस्था की संरचना में आमूल-चूल परिवर्तन का दृढ़-संकल्प लिए इस शिक्षा नीति का उद्देश्य श्रेष्ठ मनुष्य को निर्मित करना है, एक ऐसा मनुष्य जो तर्कसंगत विचार वाला हो और कार्य करने की अपेक्षित क्षमता, दक्षता व कौशल से संपन्न हो, जिसमें मानवोचित संवेदना, करुणा, सहानुभूति, साहस व आत्मवत् सर्वभूतेषु की भावना हो साथ ही उनमें लचीलापन, वैज्ञानिक अभिवृत्ति और सृजनात्मक कल्पना, नैतिक मूल्य आदि गुणों का प्रकटीकरण हो।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की तरह हम भारतीयों की चिरप्रतीक्षित अभिलाषा - 'स्वत्व निज भारत गहै' नई शिक्षा नीति से अब पूरी होती लग रही है।

- कार्यालय अधीक्षक,
कार्मिक विभाग
पूम्परे, हाजीपुर



बड़ी उपलब्धियों व आशातीत सफलता के लिए देखें बड़े सपने

- सीताराम गुप्ता



कुछ लोग जीवन में आने वाली समस्याओं से विशेष रूप से आर्थिक समस्याओं से घबराकर अपने खर्चों में कटौती करने और अपने सपनों का गला घोटने में लग जाते हैं। उनके अनुसार जीवन में समस्याओं से बचने का यही एकमात्र उपाय है, लेकिन वास्तविकता इसके विपरीत होती है। समस्याओं से बचने से न तो हमारी समस्याएँ कम होती हैं और न उनका समाधान ही हो पाता है। ये तो बिल्ली को देखकर कबूतर के आँखें मूँद लेने जैसी स्थिति है। ऐसे लोग प्रायः कहते हैं कि हवाई किले मत बनाओ या दिन में सपने देखना छोड़ दो लेकिन आज ये बात सिद्ध हो चुकी है कि जीवन में आगे बढ़ने या कुछ पाने के लिए दिन में सपने देखना बहुत जरूरी है। हमारा भविष्य हमारे सपनों के अनुरूप ही आकार ग्रहण करता है। आज दुनिया में जो लोग भी सफलता के ऊँचे पायदानों पर पहुँचे हैं वे अपने सपनों की बदौलत ही ऐसा कर पाए हैं। और जो लोग किसी भी क्षेत्र में सबसे नीचे के पायदान से भी नीचे हैं वे भी अपने कमजोर व विकृत सपनों के कारण ही वहाँ हैं।

‘रिच डैड पुअर डैड’ के लेखक रॉबर्ट टी. कियोसाकी कहते हैं कि हमें अपने खर्चों में कमी करने के बजाय अपनी आमदनी बढ़ानी चाहिए, और अपने सपनों को सीमित करने के बजाय अपने साहस और विश्वास में वृद्धि करनी चाहिए। जिस किसी ने भी सही सपने चुनने और देखने की कला विकसित की है वही

संसार में सबसे ऊपर पहुँच सका है। ऊपर पहुँचने का अर्थ केवल धन-दौलत कमाने तक सीमित नहीं है अपितु जीवन के हर क्षेत्र में उन्नति व विकास से है। अच्छा स्वास्थ्य तथा प्रभावशाली व आकर्षक व्यक्तित्व पाने का सपना भी कम महत्वपूर्ण नहीं होता। जो लोग जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपेक्षित ऊँचाइयों तक नहीं पहुँच पाते जरूर उनके सपनों व उन्हें देखने के तरीकों में कोई कमी रही होगी। सपने देखना एक कला ही नहीं अपितु एक उत्कृष्ट कला है। प्रश्न उठता है कि सही सपनों का चुनाव कैसे करें और कैसे उन्हें देखें। डॉक्टर अब्दुल कलाम साहब ने कहा है कि सपने वे नहीं होते जो हम सोते वक्त नींद में देखते हैं अपितु सपने वे होते हैं जो हमें सोने नहीं देते। वास्तव में जीवन में कुछ करने या पाने की जो उत्कट इच्छा, बेचैनी या तड़प होती है वो व्यक्ति का सपना ही होता है। ऐसे सपने नींद में नहीं जागते हुए और सोच-समझकर देखे जाते हैं। रात को नींद में हम सपने देखते नहीं, अपितु वे स्वयं हमारी नींद में आ उपस्थित होते हैं, जिन्हें हम प्रायः भूल जाते हैं और वे हमें बेचैन भी नहीं करते। जो सही मायनों में हमें बेचैन कर दे, हमें सोने न देते वही वास्तविक सपना है, और ऐसे सपने पाले जाते हैं। सपना पालने के बाद उसकी देख-भाल व परवरिश की जाती है ताकि वो अपने अंजाम तक पहुँच सके। इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पश्चिमी देशों में हर साल 11 मार्च को ‘ड्रीम डे’ अथवा ‘स्वप्न दिवस’ मनाया जाता है।

वास्तविकता ये है कि हमारा मन कभी चैन से

नहीं बैठता। उसमें निरंतर विचार उत्पन्न होते रहते हैं। एक विचार जाता है तो दूसरा आ जाता है। हर घंटे सैकड़ों विचार आते हैं और नष्ट हो जाते हैं। ये विचार हमारी इच्छाओं के वशीभूत होकर ही उठते हैं। ये हमारे सपने ही होते हैं। सपनों का प्रारंभिक स्वरूप। हमारे अवचेतन व अचेतन मन में विचारों की कमी नहीं होती। पूरे जीवन के अच्छे व बुरे सभी अनुभव इनमें संग्रहित रहते हैं। ये अनुभव ही हमारे विचारों के मूल में होते हैं। इन असंख्य विचारों में से जो विचार जीवन या भौतिक जगत में वास्तविकता ग्रहण कर लेता है वो एक सपने की पूर्णता ही होता है। कई बार हमें अपने इस सपने की जानकारी भी नहीं होती। सपने की जानकारी न होने से सपने की जानकारी होना बेहतर ही नहीं बेहतरीन है। संभावना रहती है कि गलत विचार हमारा सपना बनकर हमें तबाह कर डाले। अतः नींद में नहीं अपितु खुली आँखों से सोच-समझकर सपने देखना ही श्रेयस्कर है।

अब एक और प्रश्न उठता है कि सही विचारों अथवा सपनों के चयन के लिए क्या किया जाए? सही विचारों के चयन के लिए विचारों को देखकर उनका विश्लेषण करना और उनमें से किसी अच्छे उपयोगी विचार का चयन करना अपेक्षित है। जब हम दैनिक जीवन की सामान्य अवस्था में होते हैं तो न तो विचारों को सही-सही देखना ही संभव होता है और न उनका विश्लेषण करना ही। इसके लिए मस्तिष्क की शांत-स्थिर अवस्था अपेक्षित है। ध्यान द्वारा यह स्थिति प्राप्त की जा सकती है। मस्तिष्क की चंचलता कम हो जाने पर जब हम शांत-स्थिर हो जाते हैं तो उस अवस्था में विचारों को देखना और उनका विश्लेषण करना संभव हो जाता है। उस समय हमें चाहिए कि हम

अनुपयोगी नकारात्मक विचारों पर ध्यान न देकर केवल उपयोगी सकारात्मक उदात्त विचारों पर संपूर्ण ध्यान केंद्रित कर लें। हम जो चाहते हैं मन ही मन उसे दोहराएँ। उसी विचार के भाव को पूर्ण एकाग्रता के साथ मन में लाएँ। उस भाव को अपनी कल्पना में चित्र के रूप में देखें।

अपने विचार, भाव या सपने को चित्र के रूप में देखना सबसे अधिक महत्वपूर्ण व फलदायी होता है। हम पूरे घटनाक्रम को एक फिल्म की तरह भी देख सकते हैं। आपका जो सपना है उसे एक फिल्म की तरह अथवा उस सपने की परिणति को एक चित्र की तरह देखिए। आपकी फिल्म अथवा चित्र जितना अधिक स्पष्ट होगा सपने की सफलता उतनी ही अधिक निश्चित हो जाएगी। यह पूरी प्रक्रिया हमारे मस्तिष्क को अत्यंत सक्रिय व उद्वेलित कर देती है। मस्तिष्क की कोशिकाएँ हमारे सपने के अनुरूप अपेक्षित परिस्थितियों का निर्माण करने में जुट जाती हैं और तब तक न स्वयं चैन से बैठती हैं और न हमें ही चैन से बैठने देती हैं, जब तक कि वो सपना पूरा नहीं हो जाता। बिना किसी सपने के न तो हमारा मस्तिष्क ही सक्रिय होता है और न अपेक्षित परिस्थितियों का निर्माण ही होता है। इसी से जीवन में सपनों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। अपने अंदर सपने देखने की कला उत्पन्न कीजिए। अच्छे सपनों के चयन द्वारा ही जीवन में अपेक्षित क्षेत्र में विश्व के सर्वोच्च शिखर पर कदम रखना संभव है

- ए.डी. 106 सी., पीतमपुरा

दिल्ली- 110034

मो.नं.- 9555622323

email- srgupta54@yahoo.co.in

होली

- प्रेम कुमार राय



वसंत ऋतु आते ही प्रकृति में एक नवीन परिवर्तन दिखने लगता है। फूलों पर भँवरे मंडराने लगते हैं। वृक्षों पर नए फूल-पत्ते आने शुरू हो जाते हैं। वातावरण में मादकता का अनुभव होने लगता है। ऋतुराज वसंत के आने पर प्रकृति में एक नई रौनक तथा प्राणियों में उत्साह और उमंग की लहरें दिखाई देने लगती हैं। होली के पर्व में वसंतोत्सव की रंगत ही देखने को मिलती है। नर-नारी होली के रंगों में एक-दूसरे को रंगकर एक अद्भुत आनंद का अनुभव करते हैं। आनंद के इस उत्सव को प्राचीनकाल में रति-काम महोत्सव कहा जाता था।

मान्यता है कि होली के त्योहार को आध्यात्मिक पृष्ठभूमि सतयुग में प्रह्लाद के समय मिली। एक कथा के अनुसार, दैत्यराज हिरण्यकश्यप के पुत्र प्रह्लाद भगवान विष्णु के अनन्य भक्त थे। इससे उनके पिता उनसे सदैव अप्रसन्न रहते थे। हिरण्यकश्यप ने अनेक तरह से प्रह्लाद को भक्ति मार्ग से विमुख करने की चेष्टा की, पर भक्तराज प्रह्लाद अपने पथ से नहीं डिगे। अंत में कुपित होकर हिरण्यकश्यप ने प्रह्लाद को मृत्युदंड दे दिया। पर अनेक उपाय करने पर भी प्रह्लाद को मारा न जा सका था। तब हिरण्यकश्यप की बहन होलिका ने इस संदर्भ में अपने भाई की मदद करने की सोची। होलिका के पास एक दिव्य वस्त्र था, जिसे ओढ़कर अग्नि में बैठने पर उसमें आग का असर

नहीं होता था। होलिका प्रह्लाद को गोद में लेकर चिता पर बैठ गई, पर उसमें आग लगाये जाने पर होलिका का वस्त्र हवा में उड़कर प्रह्लाद पर आ गया। दिव्य वस्त्र से ढक जाने पर प्रह्लाद सुरक्षित बच गया और होलिका भस्म हो गई। यह घटना फाल्गुन मास की पूर्णिमा के दिन घटी थी। अतएव फाल्गुनी पूर्णिमा में होलिका दहन की परम्परा बन गई। मान्यता है कि होलिका के भस्म हो जाने पर दूसरे दिन भक्तजनों ने आनंदोत्सव मनाया था। अतः चैत्र मास के कृष्णपक्ष की प्रतिपदा (परीवा) के दिन यह उत्सव लोग बड़े उल्लास के साथ मनाते हैं।

होलिका दहन के इस प्रसंग को लोग प्रतीकात्मक रूप में मनाते हैं। यह अधर्म पर धर्म की विजय का ही पर्व है। इसमें हम अपने अहंकार और अन्य बुराईयों को भस्म करते हैं और अच्छाईयों की विजय का उल्लास मनाते हैं। होलिका दहन से यह आध्यात्मिक संदेश मिलता है कि ईश्वर सत्य है। जो अच्छाईयों की राह पर चलता है, उसे स्वतः ईश्वरीय सुरक्षा प्राप्त होती है। भक्तराज प्रह्लाद से हमें ईश्वर में आस्था रखकर अपने कर्म पर अटल रहने की प्रेरणा मिलती है।

होली कृषि और धार्मिक मान्यताओं से भी जुड़ा हुआ है। होली के त्योहार के आस-पास गेहूँ, जौ और चनें की फसल तैयार हो जाती है। किंतु प्राचीन परम्परा के अनुसार किसान उसे बेचने या उपयोग में लाने से पूर्व

यज्ञ की अग्नि के माध्यम से देवताओं को उनका भाग सबसे पहले देना चाहता है। कृषक और गृहस्थ होलिका की अग्नि में नवान्न का कुछ अंश समर्पित करके ईश्वर के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं। इस प्रकार होली एक यज्ञ बन जाती है। प्राचीन समय में वैदिक सोमयज्ञ का अनुष्ठान फाल्गुन मास में होता था। होलिका दहन इसी वैदिक यज्ञ का सामाजिक प्रतिरूप है। होली में जलाए जाने वाली आग यज्ञवेदी में निहित अग्नि का प्रतीक है।

वर्तमान समय में लकड़ियों तथा उपलों कंडों आदि का ढेर लगाकर होलिका पूजन की जाती है, फिर उसमें आग लगा दी जाती है। श्रद्धालु नई फसल जैसे-गेहूँ की बालियाँ तथा गन्ना आदि उस अग्नि में चढ़ाकर एक तरह से हवन कर लेते हैं। हरे चने को आग में भून लेने पर वह 'होला' प्रसाद के रूप में ग्रहण किया जाता है। होलिका जल जाने के उपरांत उसकी भभूत को यज्ञ भस्म मानकर, उससे तिलक किया जाता है।

होलिका उत्सव आध्यात्मिक पर्व होने के साथ-साथ सामाजिक त्योहार भी है। इसमें वर्ग अथवा

जाति भेद का कोई स्थान नहीं है। इसे समाज के सभी वर्ग मिल जुलकर एक साथ मनाते हैं। सही मायनों में होली सबका त्योहार है, जिसमें हास-परिहास व्यंग्य विनोद तथा आनंद - उल्लास सभी कुछ है। इस त्योहार से सामाजिक समरसता की भावना प्रसारित होती है। इससे राष्ट्रीय एकता को भी बल मिलता है।

यह भी देखा जाता है कि लोग होली के रंग में रंग कर शत्रुता त्याग देते हैं और वर्षों पुराने दुश्मन दोस्त बन जाते हैं। होलिका की अग्नि में शत्रुता का भाव भस्म हो जाता है और नफरत खत्म हो जाती है।

होली का आनंद मन को प्रेम के रंग में डुबो देता है और मित्रता की इच्छा को जाग्रत कर देता है। वस्तुतः होली मित्रता और एकता का पर्व है। इस दिन द्वेष भाव भूलकर सबसे प्रेम से मिलना चाहिए। तभी इस त्योहार को मनाना सार्थक सिद्ध होगा। होली के आनंद को सब में बाँटना चाहिए।

- स्टेशन प्रबंधक
पूर्व मध्य रेल/दानापुर
मो.- 9308763291



दरकते रिश्ते

- निशा सहगल



आज अम्मा की खुशी का ठिकाना नहीं है। उनके बेटे की चिट्ठी आई है कि वह दादी बनने वाली हैं। कितने वर्षों से यह सुनने के लिए उनके कान तरस रहे थे। कितनी मनौतियां मानी थीं, तब कहीं जाकर आज यह दिन आया है। अम्मा दौड़-दौड़ कर सबको यह समाचार सुना रही हैं-‘अरे बबुआ, अब तुम जल्दी ही चाचा बनने वाले हो। भतीजे को सुनाने के लिए कुछ कहानी-वहानी सीख लो और मुनिया, तू बुआ बनेगी तो भी क्या ऐसी ही नकचढ़ी जैसी रहेगी? अरे, थोड़ा शान्त स्वभाव की बन, नहीं तो तू जरा-जरा सी बात पर भतीजे को मारेगी।’ अम्मा इतने विश्वास से भतीजे शब्द का प्रयोग कर रही हैं जैसे भगवान के यहां से सन्देश आया हो कि बेटा ही होगा।

वैसे तो गांव में अम्मा का सगा कोई भी नहीं है। उनका खुद का बेटा भी अपनी पत्नी के साथ शहर में रहता है। बेटे के शहर जाने के बाद से अम्मा और रामदीन बाबा दोनों अपने घर में अकेले ही रहते हैं। लेकिन अम्मा का दिल इतना बड़ा है कि पूरा गांव उसमें अपने नजदीकी रिश्ते के साथ समा सकता है। ममता की ऐसी मूरत कि गांव का हर बच्चा उन्हें अपनी औलाद लगता है। क्या मजाल कि अम्मा के रहते पड़ोस वाला बिट्टू बिना खाए ही स्कूल चला जाए या फिर मीना की बेटी बिना तेल-चोटी के गांव में घूमे। सबके लिए उनका दिल खुला है। बदले में किसी से कोई उम्मीद नहीं। किसी ने हंसकर बात की तो भी अपना, नहीं बात की तो भी अपना। वैमनस्य या विरोध शब्द का जैसे उन्हें ज्ञान ही नहीं है। अम्मा की इतनी भागदौड़, हर किसी की सेवा सहायता रामदीन बाबा को कम सुहाती है। इसलिए रामदीन बाबा हमेशा अम्मा को समझाते हैं। कभी-कभी तो दोनों में अच्छी कहा-सुनी भी हो जाती है। अभी कल ही तो बाबा अम्मा से कह रहे थे। ‘विनोद

की अम्मा, तुम पूरे गांव का जिम्मा क्यों लिए रहती हो? अपने घर का काम करके कुछ देर आराम किया करो। इस उमर में इतनी भाग दौड़ ठीक नहीं। लेकिन तुम्हें तो कभी किसी का पापड़ बनाना रहता है तो कभी किसी की बड़ी। किसी की बहू बीमार है तो किसी का बेटा परदेश से आया है। सारा भार तुम्हारे ही ऊपर है। बस, तुम से तो कोई प्यार से बोल भर दे कि तुम उड़ेल देती हो अपनी ममता की गागर।’

अम्मा कहां सुनने वाली थीं। उनका दिल और दिमाग इतना संकरा नहीं था। अम्मा ने रामदीन बाबा से कह दिया ‘देखो जी, हम दो जन के लिए बनाने खाने में समय ही कितना लगता है? खाली पड़े पड़े घर में कुढ़ते रहने या फिर गांव भर की बेटे बहुओं की बुराई करने से तो अच्छा है कि सबको अपना समझ कर उनके बीच हंसते-हंसाते दिन बीत जाए। जिन्दगी में रखा ही क्या है? अपना बेटा भी तो दूर है। वक्त. जरूरत यही लोग हमारे काम आएंगे। कल को जब मरेंगे तो रोने वालों की कमी नहीं रहेगी।’

वैसे जानने को तो रामदीन बाबा भी जानते थे कि मेरे कहने-सुनने का कुछ असर उन पर नहीं पड़ेगा। अम्मा भीतर से जितनी भावुक हैं उतनी ही सख्त और सजग भी। किसी के कहने-सुनने से उनकी भावुकता में कोई फर्क नहीं पड़ता। ऐसा प्रेम, ऐसा अपनापन किस काम का कि रामदीन बाबा कुछ बोल दें तो अम्मा पीछे हो जाएं। जब कदम बढ़ाया है तो सख्ती से, सजगता से अंत तक उसका निर्वहन भी करना है। गजब का दिल पाया है अम्मा ने। वैसे अपने घर को बिलखता छोड़ सिर्फ नाम के लिए समाज सेवा करने वाली समाज सेविकाओं जैसी नहीं हैं अम्मा। अपने घर को बड़े यत्न से संभाला है अम्मा ने। कोई कसर नहीं छोड़ी। इसलिए रामदीन बाबा भी यद्यपि अम्मा को बाहरी झंझट में न पड़ने की हिदायत देते थे, किन्तु मन ही मन पत्नी के विशाल हृदय को देख गर्वित होते थे। आज उन्हीं अम्मा

के घर खुशी का इतना बड़ा पैगाम आया है।

इधर दस-पन्द्रह दिनों से अम्मा कुछ कम दिख रही थीं। कल मैंने पूछ ही लिया- 'अम्मा, आज कल आप कहां रहती हैं, बहुत कम दिखती हैं?' अम्मा तुरन्त धोती समेटते हुए मेरे पास बैठ गई थीं, जैसे उन्हें इन्तजार ही था कि कोई उनसे उनकी व्यस्तता का कारण पूछे और फिर पूरे पन्द्रह दिन का ब्यौरा दे डाला था उन्होंने- 'क्या करती बिरजू की बहू, अब ज्यादा समय ही कहां है कि बैठकर दिन बिताऊं? बहू को बच्चा होने में सिर्फ दो महीने ही तो बचे हैं। अब जब इतने दिन पर हरियाली आई है तो 'नेग' वाले नेग मांगेंगे ही। उसकी व्यवस्था तो करनी ही पड़ेगी। नाऊन कह रही थी कि अम्मा, खाली धोती से काम नहीं चलेगा, एकाध सुनहली चीज पहनूंगी। अब नाऊन को दूंगी तो बनिया जो मेवे की थाल लाएगा वह भी तो ज़िद करेगा।' एक सुलझे विचारक की मुद्रा में बोल गई थीं अम्मा। फिर थोड़ा सा रुककर सोचते हुए आगे बोली- 'बहू के लिए सोंठ के लड्डू की व्यवस्था भी करनी है। कल गनपत के यहां गई थी। शुद्ध घी के लिए बोल आई हूं। अब का ख़ाया-पीया ही काम आता है, नहीं तो शरीर टूट जाता है।'

'सो तो है अम्मा, अब आप हैं जो बहू की इतनी जतन कर रही हैं। हर सास ऐसी थोड़ी होती है? विनोद भइया की बहू किस्मत वाली है जो आपको सास के रूप में पाई है।'

अपनी प्रशंसा सुनकर अम्मा के चेहरे पर गुलाबी रंगत आ गई। फिर थोड़ा मुस्कराते हुए वह अपनी आगे की तैयारी बताने लगीं - 'भोला सुनार के यहां भी मैं गई थी। पोते के लिए सोने की चैन बनवाने को बोल आयी हूं। वह उधारी में दो-चार जोड़ चांदी की पायल देने को तैयार हो गया है। अब बिरजू की बहू, सबको सुनहले की आशा है तो कम से कम चांदी का तो दे ही दूं। दस-बारह जोड़ी कपड़े भी तो लेने पड़ेंगे। आखिर दादी हूं मैं।'

मैंने कहा- 'अम्मा, इन सब कामों के लिए विनोद भइया पैसे देंगे ही, तुम क्यों इतनी चिन्ता कर रही हो, सब हो जाएगा।'

अम्मा अपने सिर से खिसकती हुई धोती को ऊपर

खींचते हुए बोली थीं। 'मैं विनोद के भरोसे थोड़े बैठूंगी बहू, उसकी भी कौन-सी बड़ी नौकरी है। शहर का खर्चा तो जानती ही हो। गांव जैसा कहां कि कोई आया तो गुड़ पानी देकर फुर्सत मिले। आखिर शहर में भी तो उसके यार दोस्त खाने खिलाने को कहेंगे। दोनों जगह का खर्च वह कैसे कर सकेगा? यहां का तो सब मैं ही संभालूंगी। अपने बाबा को तो जानती ही हो। दुनिया इधर की उधर हो जाए उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता। मैं सलाह मशविरा करती हूं और वह हैं कि हां-हूं कह कर बात को टाल देते हैं।'

अचानक अम्मा का चेहरा कुछ दुखी हो गया। नम आंखों को पोंछते हुए बताने लगी- 'कल विनोद की चिट्ठी आई थी। लिखा था कि बहू सैर के लिए मायके जाएंगी, यहां उसकी देखभाल नहीं हो पाएगी।' फिर जैसे खुद को ही समझाते हुए बोली। 'वहां उसकी मां है, देखभाल कुछ अधिक जतन से होगी। विनोद ने भी सोचा होगा कि हमारे अम्मा-बाबूजी क्यों परेशान हों। दौड़-धूप अलग से करनी पड़ेगी, पैसा अलग खर्च होगा, इसलिए वह भी उसके मायके जाने पर राजी हो गया होगा। और बिरजू की बहू, ससुराल ससुराल ही होती है। मैं कितना भी उसे काम न करने को कहूंगी लेकिन वह मानेगी नहीं। मेरा ही लिहाज उसे आराम नहीं करने देगा। अच्छा हुआ जो विनोद ने उसे मायके भेजने को सोचा।' अम्मा के चेहरे पर संतोष झलक रहा था। अचानक अम्मा कुछ याद करते हुए जल्दी से उठ गई। 'चलूं बहू, बहुत काम है। बच्चा भले ही उसके मायके में हो, बरही तो यहीं होगी, उसका तो सब करना ही है।' कहकर तेज कदमों से अम्मा आगे की व्यवस्था करने चली गई।

इंतजार की घड़ी बीती। विनोद का सचमुच बेटा ही हुआ। अम्मा के घर में बधाई देने वालों का तांता लग गया। हमेशा शान्त रहने वाले रामदीन बाबा भी आज दौड़-दौड़ कर सबका स्वागत कर रहे थे। अम्मा के चेहरे पर तो खुशी के हजारों दीप जगमगा रहे थे। वह दौड़-दौड़ कर सबको मिठाई खिला रही थीं। कोई बुआ बनने का नेग मांग रही थी, तो कोई दीदी बनने का। अम्मा किसी को नेग देने की हामी भर रही थी तो किसी को यह बता रही थीं कि उनका हक उस बच्चे पर

अम्मा से पहले है। बगल वाली हीरा की काकी ने पूछा- 'बरही कब कर रही हो? क्या सवा महीने तक बहू मायके में ही रहेगी?' अम्मा ने झट उत्तर दिया। 'नहीं दीदी, सवा महीने वहां रहेगी तो मैं पोते को देखे बगैर कैसे रह पाऊंगी? कल पहले विनोद के बाबूजी को भेजूंगी, फिर दस-पंद्रह दिन बाद कोई अच्छी सी तिथि देख कर उसे बुला लूंगी।'

रात हो गई थी। सब अपने अपने घर जा चुके थे। अम्मा घर का काम निपटा कर सोने की तैयारी करने लगीं। बिस्तर पर लेटीं तो, लेकिन आज अम्मा को नींद नहीं आ रही थी। वर्षों से संजोया हुआ सपना आज साकार हो गया था। चेहरे पर इंतजार खत्म होने का तृप्ति भाव था और मन में बरही के कार्यक्रम की उधेड़ बुन। दिल पोते के काल्पनिक चेहरे पर टिका हुआ था। कैसा दिखता होगा वह? जरूर विनोद जैसा ही होगा। उन्हें सत्ताईस साल पहले का नन्हा, प्यारा, गोलमटोल आंखों वाला विनोद याद आ गया। कितना प्यारा था विनोद, सफेद रुई के फाहे जैसा। सिर में नरम नरम काले बाल। साक्षात् कन्हैया दिखता था। समय इतनी जल्दी बीत गया। वही नन्हा विनोद आज बाप बन गया है। एक सुंदर से बेटे का बाप। हां, सुंदर ही होगा उनका पोता, आखिर उनकी बहू भी तो लाखों में एक है।

उस रोज अम्मा अपने घर के आंगन में कुछ उदास बैठी थीं। मुझे लगा, शायद तबीयत ठीक नहीं होगी इसलिए पास जाकर हालचाल पूछने लगी। बहुत यत्न से रोके गए उनके आंसू मुझे देखते ही लुढ़क पड़े।

आंखों को पोंछते हुए बताने लगीं- 'आज विनोद की चिट्ठी आई है। बहू के मायके वाले बरही अपने ही घर में करना चाहते हैं। लिखा है कि इतने दिन से सेवा सहायता कर रहे हैं। अगर बरही के लिए अपने यहां बुला लूंगी तो उन लोगों का मन टूट जाएगा। उसने आगे लिखा है कि वह शहर से सीधे वहीं चला जाएगा और यहां से बाबूजी को भेज देना। विनोद के बाबूजी तो चिट्ठी पढ़ते ही नाराज हो गए, लेकिन मैंने उन्हें समझाया। मन तो मेरा भी बहुत दुःखी हुआ लेकिन बहू, विनोद ने ठीक ही लिखा है कि आखिर परेशानी तो उन लोगों ने उठाई फिर खुशी मनाने का हक उनसे क्यों छीने? तुम्हारे बाबा के हाथों बच्चे का कपड़ा और चैन

भेज दूंगी। फिर बहू शहर जाने से पहले तो यहां आएंगी ही, तब गाना बजाना करके मैं भी अपना शौक पूरा कर लूंगी।' अम्मा यंत्रवत् कह गई थीं। उनकी आवाज में न तो कोई जोश था न उत्साह। दिल की लाचारी तथा मुख पर पीड़ा के भाव स्पष्ट झलक रहे थे। मैं अम्मा के अब तक के उत्साह तथा इस हताशा का मन ही मन आकलन करने लगी। अम्मा की ममता धोखा खा गई।

कई दिनों से अम्मा को देखा नहीं। उनसे मिलने जाने को सोच ही रही थी कि रामदीन बाबा आ गए। मुझे लगा, विनोद भइया की बहू घर आई हैं। यह संदेशा देने आए होंगे, लेकिन आते ही वह क्षीण आवाज में बोले 'बिरजू की बहू, अपनी अम्मा को समझाओ, कल से उसने खाना तक नहीं खाया है।' मैंने कारण पूछा तो बाबा ने बताया।- 'कल विनोद ससुराल से ही अपनी बहू तथा बच्चे को लेकर शहर चला गया। कह रहा था कि छुट्टी नहीं है। यहां आने पर चार-पांच दिन बेकार चले जाते, सो फिर कभी लम्बी छुट्टी लेकर आराम से आएगा।'

मैं अम्मा के पास आ तो गई, लेकिन समझ नहीं पा रही थी कि पेड़ से टूटे हुए सूखे पत्ते को भला मैं कैसे सहारा दे पाऊंगी। मैंने अम्मा की तरफ एक दर्द भरी दृष्टि डाली, उनके चेहरे पर अव्यक्त पीड़ा मुझे साफ दिख रही थी। वह लगभग कराहती हुई आवाज में बोलीं- 'विनोद दो-चार दिन के लिए आकर मुझे मोह में नहीं डालना चाहता था, इसलिए फिर कभी लम्बी छुट्टी लेकर आएगा। बहुत प्यार करता है मुझे। वह तो बच्चे को देखने का बहुत मन था, इसलिए मैं दुःखी हो गई थी।'

मैं हतप्रभ थी। ममता की इस मूरत को भला मैं क्या समझाऊं। समझना तो विनोद जैसे बेटों व कुसुम जैसी बहू को चाहिए जो मां की निश्छल ममता को ठग लेते हैं, और बरसों से संजोये मां-बाप के अरमानों को पलभर में तोड़ देते हैं। वैसे मन ही मन समझ अम्मा भी रही थीं बेटे के प्यार को, और समझ मैं भी रही थी अम्मा की विवशता को।

डी-1209ए डबुआ कॉलोनी, सेक्टर
फरीदाबाद-121001 (हरियाणा)
मो.- 9871346063

असली पागल कौन?

- रमेश कुमार 'राही'



एक बार मुझे बिहार की राजधानी 'काया-कल्प' से विख्यात पटना जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मेरे साथ मेरी भाभी एवं उनकी चौदह वर्षीया पुत्री शिल्पा भी थी।

भाभी को उदर रोग था। इन्हें फिजिशियन से दिखाने वास्ते हमलोग अपने गांव से पटना आए थे। वहाँ ट्रेन से उतरने के बाद हमलोग प्रतीक्षालय गए। वहाँ स्नान-ध्यान से निवृत्त होने के बाद स्टेशन से बाहर आए। सामने सुविख्यात बजरंगबली का विशाल मंदिर देखकर सबका मन खिल उठा। मंदिर में हो रहे निरंतर भजन कीर्तन एवं रामचरितमानस के पाठ से दूर-दूर तक का वातावरण आच्छादित तो हो ही रहा था, साथ ही आसपास के दुकानदारों एवं राह चलते लोगों के हृदय तंत्रों में एक अलग झंकार उठता सा प्रतीत होता था। पर दूसरी ओर, सड़क पर पेट्रोल और डीजल का धुंआ छोड़ते वाहनों का बढ़ता तांता, उसके चीखते गलों से उठती-बैठती बेचैन आवाजें। फुटपाथों को रौंदता कंधे से कंधा टकराता अपने में खोया जनरेला और उसका उठता उखड़ता कोलाहल तथा गर्दा फांकते इन शहरी लोगों की व्यस्तता देखते बनती थी।

चूँकि हमलोग गांव के शांत एवं स्वच्छ वातावरण के माहौल से निकलकर यहां आये थे, इसलिए यहां का कोलाहल और भीड़-भाड़ हमें रास नहीं आ रहा था। यहां की सड़कों पर चलना एक बड़ा ही जोखिम भरा काम था; क्योंकि वाहन चालक से लेकर ठेला वाले,

फल बेचने वाले, रिक्शा एवं ऑटो वाले सभी अपनी मर्जी के मालिक थे। ट्रैफिक नियमों का पालन करना या तो ये नहीं जानते थे या दूसरे शब्दों में कहा जाय, तो यहां कोई भी यातायात नियमों का पालन नहीं करता था। जिसे जहां इच्छा हुई, वहीं अपनी गाड़ी खड़ी कर दी।

ऑटोवाले, रिक्शावाले, फल एवं सब्जी बेचने वाले, फेरी वाले, इन सबों को तो पूछिए मत। आधी सड़क इन्हीं लोगों द्वारा अतिक्रमित था। अपने को चुस्त-दुरुस्त कहने वाला यहां का प्रशासन क्यों इनके प्रति आंखें मूंदे था, क्या कारण हो सकता था? यहां के वासिंदों के जुबान पर मानो बार-बार यही सवाल चक्कर काटता था। लोगों का पैदल चलना मुहाल था। पर यहां के लोग इसी वातावरण में रहकर खुश थे। आज मंगलवार था। इत्तेफाक से हमलोग पटना के इस सुप्रसिद्ध बजरंगबली मंदिर के बाहर खड़े थे। दर्शनार्थियों की भीड़ भी कुछ कम नहीं थी। ठंड के बावजूद मंदिर के बाहर बैठे भिखारियों की संख्या देखते बनती थी। भाभी ने मंदिर में जाने की इच्छा व्यक्त की।

हमलोग फौरन तैयार हो गए। फूल प्रसाद लेने दुकान पर पहुंचे। प्रसाद लेने के बाद शिल्पा ने याद दिलाया, 'छोटे पापा, हमलोग यहां तक आए ही हैं, तो क्यों न बजरंगबली के मंदिर में घी का दीप जलाने के लिए थोड़ा घी खरीदकर मंदिर में दे दिया जाय।' बताते चलें कि बजरंगबली मंदिर में अखंड ज्योत जलती है, भक्तजन उसमें घी डालते रहते हैं। शिल्पा को यह बात

उसके पापा ने बताया थी जो कई बार यहां आ चुके हैं। वैसे, शिल्पा गांव के मंदिर में भी हर मंगलवार को घी का दीप नियमित जलाया करती है। मुझे और भाभी को भी उसका सुझाव पसंद आया। हम सभी को वहां से सौ फलांग की दूरी पर न्यू मार्केट में स्थित घी की दुकान पर पहुंचने में बीस मिनट लग गए, क्योंकि सड़क पार करके कूड़ों के ढेर एवं गंदी नालियों के पानी का सड़क पर बहाव से बचते-बचाते पहुंचना था।

दुकानदार अभी-अभी अपनी दुकान खोलकर साफ-सफाई कर रहा था। सुबह के नौ बज रहे थे। एक तो ठंडी हवा, उपर से गंदे माहौल से सबकी नाक बहने लगा था। दुकानदार ने हमें अपनी दुकान की तरफ आते हुए देखकर पूछा, 'क्या लेंगे साब..?' 'शुद्ध घी है..?' दुकानदार ने हमें ऐसे देखा मानो हमलोग किसी दूसरे ग्रह के प्राणी हों। वह मेरा मुंह ताकने लगा। औरत और बच्ची को साथ में देखकर आश्वस्त हुआ। फिर कुछ क्षण पश्चात् उसके मुंह से बोल फूट पड़े, 'हां-हां... है न... कौन सा लेंगे..? 250 रुपये प्रति किलो वाली या 400 रुपये वाला..?' 'हम समझे नहीं, दोनो में अंतर क्या है..?' मेरे इस प्रश्न से हड़बड़ाकर बोला, 'साब, आपलोग बाहर से आए हैं?' 'हां, बाहर से ही आए हैं, पर तुम ये क्यों पूछ रहे हो?'

मेरी झुंझलाहट भांपकर उसने कहा, 'तभी तो बार-बार शुद्ध शब्द का इस्तेमाल करके आप हमें शर्मिंदा कर रहे थे। सुबह-सुबह हम झूठ नहीं बोलेंगे... आप 400 वाली ही लीजिए।' 'क्यों 250 वाला में क्या खराबी है...?' 'देखिए साब हमारे यहां माल जैसे आता है हम वैसे ही बेचते हैं। 250 वाला में शुद्धता की कोई गारंटी नहीं है। जिसको सस्ता चाहिए वह इसे लेता है...। आप साब 400 वाला लीजिए न...।' बात लंबी होते देख

भाभी ने झट कहा, '400 वाला ही दे दो भाई।' उधर जब वह घी तौल रहा था हम सोच रहे थे मीडिया द्वारा नकली घी का पर्दाफास करने के बाद जगह-जगह प्रशासन द्वारा नकली घी की फैक्ट्रियों पर मुकदमा चलाने एवं फैक्ट्री सील करने के बावजूद बाजार में धड़ल्ले से नकली घी की बिक्री हो रही है।

हमारा लचर कानून इनका कुछ नहीं बिगाड़ पाता। ये फिर से सर उठाकर खड़े हो जाते हैं। सरकार जितना भी जतन कर ले, मिलावट करने वालों एवं जमाखोरों को समूल नष्ट करना टेढ़ी खीर है, क्योंकि इनकी जड़ें काफी गहरी और मजबूत हो चुकी हैं। इन्हें उखाड़ने के लिए राजनीतिज्ञों को स्वार्थ रहित इच्छा शक्ति को प्रबल करना होगा। तभी हमें शुद्ध खाना-पीना नसीब होगा। एकाएक भाभी ने केहुनियाकर मेरा ध्यान भंग किया, 'पैसा दो, क्या सोच रहे हो...?' पूर्व स्थिति में आकर मैंने तुरंत घी का पैसा चुकता किया और हमलोग वहां से चलने को मुड़े ही थे, तभी कहीं से एक वृद्ध पागल वहां आ टपका।

बेहद दुबला-पतला इकहरी काठी, पिचके गाल, लम्बी-लम्बी सफेद दाढ़ी, धूल मिट्टी से अटे उसके लंबे बाल, शरीर पर गंदगी से कड़ी, मटमैली चड्डी और अधबाहों का कुर्ता, जो कहीं-कहीं फट चुका था तथा गंदगी और पसीने से कड़ा प्रतीत होता था। नीचे फटी गंदी सी लुंगी को लपेटकर कमर से बांध लिया था, और अपनी मस्ती में गीत गाये जा रहा था... 'छपरा हिले बलिया हिले...।' गाने के साथ बीच-बीच में वह नाचने भी लगता। उसके इस हरकत से लोगों को कोई खास आश्चर्य नहीं हुआ; क्योंकि यहां उन्हें अक्सर इन भिखारियों एवं पागलों का सामना करना पड़ता था।

तभी एक शरारती लड़के ने उस पर कंकड़

फेंककर उसे छेड़ने की कोशिश की। पर वह अपनी मस्ती और अपने ही धुन में खोया रहा। एक दुकानदार ने तो हद कर दी अमानुषकता की हदें पारकर इस कड़ाके की ठंड में उसके शरीर पर एक मग पानी फेंका, तो वह ठंड से तिलमिला उठा। एकाएक वह आपे से बाहर हो गया। जोर-जोर से चिल्ला-चिल्लाकर, भद्दी-भद्दी गालियां बकने लगा। वृद्ध पागल का रौद्र रूप देखकर हमलोग दुकान के पास ही एक तरफ खड़े हो गए। शिल्पा और भाभी वहां से चलने को तैयार नहीं हो रहे थे, पता नहीं पागल उनलोगों पर हमला कर दे या कुछ कर बैठे। एक दुकानदार के कारिन्दे ने उसे डंडा का भय दिखाकर भगाना चाहा, पर वह एक दूसरा ही रूप अख्तियार कर लिया। अनाप-सनाप बकने लगा... 'सलमान खान है तू... तुझे नहीं छोड़ूंगा... सब मरोगे.. सब चोर है.. सब मरेगा... इत्यादि।' बीच-बीच में वह नाचने भी लगता। वहां के बच्चें चुटकियां लेने से बाज नहीं आ रहे थे।

हमलोग जिस घी के दुकान पर खड़े थे, उसके सामने ही रामस्वरूप बाबू की कबाड़ी की दुकान थी। वे अपने दुकान के काउन्टर पर बैठकर हिसाब-किताब कर रहे थे। उन्हें उस पागल की हरकत जब बर्दाश्त नहीं हुई तो अपने कारिन्दे की तरफ इशारा किया। उसने झट एक मोटा सा डंडा निकाला। रामस्वरूपजी काउन्टर से उठे। डंडा लिए बाहर आये और भद्दी सी गालियां बकते हुए उस पागल पर लगे डंडे बरसाने। लोग उनके इस हरकत से हतप्रभ रह गए। आसपास के दुकानदारों ने उन्हें मना किया, 'अरे, अरे..... रामस्वरूप बाबू, ये क्या कर रहे हैं... पागल है बेचारा। छोड़ दीजिए...।' पर रामस्वरूप बाबू पर तो मानो भूत सवार हो चुका था। बेतहाशा गंदी गालियां बकते हुए उसपर डंडे बरसाये जा

रहे थे।

अंत में ठंड से सिकुड़े वह वृद्ध पागल डंडे के वार से बचता गिरता-पड़ता वहीं लेट गया। रामस्वरूप बाबू को तसल्ली नहीं मिली वह उसके दोनों बांह पकड़कर घसीटते हुए सड़क के उस पार ले गए और गालियां देते हुए बोले, 'माधर.....सब पागलपनी छोड़ा देंगे..... अबकी बार इधर दिखा, तो जान से मार दूंगा.....साला पागल कहीं का...।' हमलोग वहां से निकलकर सड़क पर आये। चोटों से आहत वृद्ध पागल नितांत हताश मुद्रा में स्वीकृति सूचक मस्तक हिलाकर कुछ बिखरे से शब्दों में बुदबुदाते हुए उठा। उसके मुखमंडल पर दीनता का भाव और भय छाया हुआ था। उसकी आंखों से छलके आंसू मानो कह रहे हो कि 'हे प्रभु, मेरे गुनाहों की सजा पहले से क्या कम थी.. जो इतनी सजा आज फिर दे दी..?' डंडे की चोट से उसका शरीर कई जगह से जखमी हो गया था और वहां से खून रिस रहा था। फिर भी सारे दुख-दर्द को भगवान शंकर की तरह बिषपान करते हुए, बिना किसी को कुछ कहे, लंगड़ाते हुए वही गीत गुनगुनाता हुआ आगे बढ़ गया। उसके शारीरिक एवं मानसिक स्थिति का अनुमान कर हम सब मर्माहत हो गये। मेरी भतीजी शिल्पा का चेहरा रुआंसा हो आया। ऐसा लगा मानो उसके अन्दर सैकड़ों विचार उमर-घुमड़ रहे हो। मुझे समझते देर नहीं लगी कि वह उस लाचार पागल को लेकर भावुक हो उठी थी। उसके मन में जो विचार उठ रहे थे उसे जानना मेरे लिए बहुत जरूरी था। 'क्या हुआ शिल्पा, तुम इतने गुमसुम क्यों हो...?' शिल्पा रुआंसा सा चेहरा मेरी तरफ करते हुए उदासीन कण्ठ से बोली, 'छोटे पापा, इस ठंड में उस आदमी ने उस बूढ़े बाबा को कितनी बेरहमी से पीटा...!' वह बोल रही थी तो उसके मुखमंडल पर साफ पीड़ा झलक रही थी।

‘क्या करोगी बिटिया, कुछ लोग बेरहम होते ही हैं, ऐसे लोग कीचड़ से कीचड़ को साफ करना चाहते हैं।’ ‘पर पापा, एक बात कहूँ...?’ ‘बोलो।’ मैंने उसके सर पर हाथ फेरते हुए कहा। “छोटे पापा आप बताइये, असली पागल कौन था...?” ‘तुम बताओ।’ ‘मैं बताऊँ...?’ वह कुछ देर हम दोनों की तरफ ताकती रही फिर धीरे से बोली, ‘वह तो पागल था, इसलिए वह क्या कर रहा था क्या बक रहा था, उसे इस बात का होश ही नहीं था। पर असली पागल तो वह आदमी था, जिसने उसको मारा पागलों की भाँति, बल्कि उससे भी बढ़कर। गालियाँ बकते हुए उसपर डंडे बरसा रहा था...।’ –बोलते बोलते शिल्पा का चेहरा लाल हो गया।

हमलोग हतप्रभ शिल्पा का मुँह ताकने लगे। प्यार से उसके सर पर हाथ रखा- ‘तुम ठीक कहती हो बिटिया, हर आदमी अपने किये कर्मों का भोग भोगता है...। पर कुछ लोग अपनी जवानी और ताकत के बल पर गरीबों और मजलूमों पर अत्याचार करके अपने को गौरवान्वित महसूस करते हैं। पर जब ईश्वर का कहर उन पर टूटता है, तब उनकी आँखें खुलती हैं। तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। फिर वैसे लोग पश्चाताप करते हुए ईश्वर से क्षमा याचना करते हुए सीखते हैं। समय बहुत बलवान होता है। ईश्वर उसे कभी माफ नहीं करेगा। अब चलो मंदिर आ गया।’ यह कहकर मैंने शिल्पा का ध्यान उस वाक्य से हटाने की कोशिश की।

हमलोग सभी अपने जूते, बैग इत्यादि बाहर काउन्टर पर जमा करके फूल प्रसाद लेकर मंदिर में प्रवेश किए। पूजा-पाठ करने के बाद घी पंडितजी को दे दिया जो हमलोगों ने दुकान से खरीदा था। उन्होंने उसे प्रज्वलित दीप में डाल दिया। हम सभी ने भगवान का आशीर्वाद प्राप्त किया। फिर हमलोग मंदिर के बाहर आ

गए। बाहर शिल्पा ने सकुचाते हुए कहा, ‘छोटे पापा, मेरे बैग में एक पुराना शॉल है। अगर आपलोग कहें, तो मैं उस बूढ़े बाबा को दे दूँ?’

यह सुनकर मैंने शिल्पा को गले लगा लिया और कहा, ‘नेकी और पूछ-पूछ।’ हमलोग लौटकर वहाँ गए, परन्तु वह कहीं दूर चला गया था। काफी खोजने, पर वह नहीं मिला। निराश होकर हमलोग लौट ही रहे थे कि वही बूढ़ा वृद्ध दिख गया। वह सड़क के किनारे रात में किसी के द्वारा जलाये गए अलाव जो अब तक बुझ चुका था, उसके पास बैठ, घुटनों को मोड़ सिकुड़ कर अपने को गर्म करने का प्रयास कर रहा था। उसे देखकर शिल्पा की आँखें चमक उठी। शिल्पा को अकेले भेजना ठीक नहीं लग रहा था; क्योंकि वह अपने होशो-हवास में नहीं थी। इसलिए सबको एक तरफ खड़ा करके शॉल लेकर हम खुद उसके पास गए और बिना उससे कहे शॉल खोलकर उसे ओढ़ा दिया।

उसने मुड़कर मेरी तरफ देखा, कुछ बुदबुदाते हुए अपना दाहिना हाथ ऊपर किया फिर वह अपने में खो गया। हम वहाँ से जब चले, तो ऐसा एहसास हुआ मानो मेरी आत्मा मुझसे कह रही हो बेटा, इससे बड़ा पुण्य यज्ञ करके भी कोई नहीं कमा सकता। धन्य है, तुम्हारी भतीजी। सुबह के दस बजने को थे, इसलिए हमलोग तुरन्त ऑटो करके डॉक्टर के यहाँ निकल गए। आज कई साल बीत गये, पर शिल्पा का वही सवाल आज भी मेरे दिमाग में घूमता रहता है कि असली पागल कौन था...?

- मुख्य टिकट निरीक्षक (सेवानिवृत्त)
नीता भवन, कोलाकुसमा
(प्रभात खबर प्रेस के बगल में)
धनबाद, झारखंड 828109
फोन नं.- 7004669713

भारतीय समाज में बदलते पारिवारिक मूल्य

- सीमा रानी



भारतीय समाज अपनी समृद्ध पारिवारिक संरचना और सांस्कृतिक मूल्यों के लिए जाना जाता है। पारंपरिक रूप से, परिवार एकजुटता, सहयोग और सामूहिक जीवन पर आधारित रहा है। संयुक्त परिवार प्रणाली ने वर्षों तक समाज में मजबूती बनाए रखी, लेकिन जैसे-जैसे आधुनिकता, शहरीकरण, औद्योगीकरण और वैश्वीकरण का प्रभाव बढ़ता गया पारिवारिक मूल्य बदलने लगे।

वर्तमान समय में एकल परिवार, स्वतंत्रता की बढ़ती भावना और व्यक्तिगत प्राथमिकताओं के कारण पारंपरिक परिवार व्यवस्था में कई परिवर्तन देखे जा रहे हैं।

पारंपरिक भारतीय समाज में परिवार केवल रक्त संबंधों तक सीमित नहीं था, बल्कि यह एक सामाजिक संस्था थी जो नैतिकता, संस्कार और अनुशासन को बढ़ावा देती थी।

संयुक्त परिवार प्रणाली में दादा-दादी, माता-पिता, चाचा-चाची और उनके बच्चे एक साथ रहते थे। परिवार के बुजुर्गों का सम्मान और आदर किया जाता था और उनके निर्णयों को ही सर्वोपरि माना जाता था।

संयुक्त परिवार में व्यक्तिगत इच्छाओं को परिवार के हित में समर्पित करने की परंपरा थी। एक परिवार के सदस्य अन्य सदस्यों की आर्थिक और भावनात्मक मदद करते थे।

संस्कार और परंपराएँ जिंदा रखी जाती थीं। धार्मिक

अनुष्ठान, रीति-रिवाज और पारिवारिक संस्कारों को पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाया जाता था।

वर्तमान समय में सामाजिक और आर्थिक बदलावों के कारण पारिवारिक संरचना में अनगिनत परिवर्तन देखे जा सकते हैं; जैसे- संयुक्त परिवार से एकल परिवार की ओर रुझान बढ़ा है।

औद्योगीकरण और शहरीकरण के प्रभाव से संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवारों में बदल रहे हैं।

नौकरी, शिक्षा और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की तलाश में लोग अपने पैतृक घरों से दूर शहरों में बस रहे हैं जिससे संयुक्त परिवार की अवधारणा कमजोर हो रही है। समय के साथ-साथ पारंपरिक भूमिका में भी बदलाव आया है।

पहले परिवार में पुरुष घर का मुखिया होता था और महिलाएँ घरेलू कार्यों तक सीमित रहती थीं। लेकिन आज महिलाएँ शिक्षा और रोजगार में पुरुषों के बराबर भागीदारी निभा रही हैं, जिससे पारिवारिक भूमिकाओं में बदलाव आया है। अब पुरुष भी घरेलू कार्यों में सहयोग देने लगे हैं। व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता बढ़ी है।

आज की पीढ़ी स्वतंत्रता को अधिक महत्व देने लगी है। युवा अपने करियर और व्यक्तिगत जीवन में निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र रहना चाहते हैं। यह प्रवृत्ति विवाह, पारिवारिक संबंधों और जीवनशैली में भी स्पष्ट रूप से दिखती है।

इंटरनेट, सोशल मीडिया और मोबाइल फोन के बढ़ते प्रभाव ने परिवार के सदस्यों के बीच बातचीत के तरीकों को बदल दिया है। पहले जहाँ परिवार के सदस्य एक साथ बैठकर समय बिताते थे और आपस में अपने सुख-दुख बांट लेते थे, वहीं आज डिजिटल उपकरणों के कारण आपसी संवाद कम होता जा रहा है।

आधुनिक समय में विवाह और पारिवारिक संबंधों में भी बदलाव आया है। विवाह अब केवल पारिवारिक निर्णय नहीं रह गया है, युवा अपने जीवनसाथी का चुनाव स्वयं करना पसंद करते हैं।

प्रेम विवाह और अंतर्जातीय विवाहों की संख्या बढ़ रही है। साथ ही साथ तलाक की दरें भी बढ़ रही हैं, जिससे पारिवारिक संरचना पर प्रभाव पड़ा है। एकल परिवार के कारण वृद्धजनों की स्थिति में बदलाव आया है। संयुक्त परिवार प्रणाली में बुजुर्गों को सम्मान और देखभाल मिलती थी। लेकिन एकल परिवारों के बढ़ने और आधुनिक जीवनशैली की व्यस्तता के कारण वृद्ध माता-पिता की देखभाल एक चुनौती बनती जा रही है। बच्चे अपने पैरों पर खड़ा होते ही विदेश की ओर अग्रसर हो जाते हैं। कई वृद्धजन अब अकेले रहने को मजबूर हैं या वृद्धाश्रमों में जाने लगे हैं। बदलते मूल्यों के सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव पड़ रहे हैं। पहले हम सकारात्मक प्रभाव की बात करते हैं:

1. व्यक्तिगत स्वतंत्रता-लोग अपने जीवन के निर्णय स्वयं ले सकते हैं, जिससे आत्मनिर्भरता बढ़ती है।
2. लैंगिक समानता-महिलाओं को अधिक स्वतंत्रता और समान अवसर मिल रहे हैं।
3. शिक्षा और करियर पर ध्यान युवा अपने भविष्य को लेकर अधिक जागरूक हो गए हैं।

4. मनोवैज्ञानिक संतुलन जबरदस्ती रिश्तों को निभाने की बजाय लोग स्वस्थ और सकारात्मक संबंधों को प्राथमिकता देने लगे हैं। पर इसके कुछ नकारात्मक प्रभाव भी हैं:

1. परिवार के सदस्यों के बीच संवाद की कमी आ रही है। जिसके कारण संबंधों में दूरी बढ़ती जा रही है।
2. बुजुर्गों की देखभाल में कमी आ रही है और बुजुर्ग अपने आप को उपेक्षित महसूस करने लगे हैं।
3. माता-पिता के व्यस्त जीवन के कारण बच्चों को परिवार के साथ बिताने का पर्याप्त समय नहीं मिल पाता है और बच्चे अंतर्मुखी होते जा रहे हैं।
4. पारंपरिक मूल्यों का हास संस्कार, रीति-रिवाज और सांस्कृतिक परंपराओं का प्रभाव धीरे-धीरे कम हो रहा है।

भारतीय समाज में पारिवारिक मूल्य समय के साथ बदलते रहे हैं और आगे भी बदलते रहेंगे। आधुनिकता और पारंपरिक मूल्यों के बीच संतुलन बनाना आज की सबसे बड़ी चुनौती है। हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता के साथ-साथ परिवार का महत्त्व भी बना रहे। पारंपरिक मूल्यों को आधुनिक दृष्टिकोण के साथ समायोजित करके हम एक सशक्त और संतुलित समाज का निर्माण कर सकते हैं

- न्यू एल आई सी कॉलोनी,
राजधानी गैस एजेन्सी रोड,
शिवपुरी, पटना

रिटायरमेंट

- राकेश रौशन



‘रिटायरमेंट’ शब्द से ही आप लोग समझ गये होंगे कि मैं किस रिटायरमेंट की बात कर रहा हूँ। क्योंकि रिटायरमेंट कई तरह के हो सकते हैं- कोई फिल्मी जगत से रिटायरमेंट लेता है तो कोई क्रिकेट जगत से। लेकिन मैं यहां उन दोनों की बात नहीं कर रहा हूँ। मैं यहाँ सरकारी कार्यालय से रिटायरमेंट की बात कर रहा हूँ। रिटायरमेंट अच्छा होता है या बुरा और इसका दैनिक जीवन में क्या प्रभाव पड़ता है, रिटायरमेंट की सही उम्र क्या होनी चाहिए, क्या व्यक्ति को सचमुच उसके जिम्मेदारियों से रिटायरमेंट मिलती है, क्या रिटायरमेंट के बाद परिवार में व्यक्ति की महत्ता वही रहती है जो रिटायरमेंट से पहले थी, कहीं रिटायरमेंट की सही उम्र मृत्यु तो नहीं? ऐसे ही कई अनगिनत सवाल इस एक शब्द में छुपे हैं जिनका जवाब शायद हमलोग के पास भी नहीं।

सरकारी कार्यालयों से एक न एक दिन सभी को रिटायर होना पड़ता है पर क्या वे सचमुच चाहते हैं रिटायर होना या वे सिर्फ नियमों का पालन करते हैं? रिटायरमेंट के बाद आप क्या-क्या कर सकते हैं या क्या-क्या करना चाहेंगे, ये भी एक बहुत बड़ा प्रश्न है जिसका जवाब सभी लोग रिटायरमेंट से पहले सोच लेते हैं। लेकिन रिटायरमेंट के बाद क्या वे सभी सोची हुई बातों पर अमल कर पाते हैं? आइये इन्हीं सब बातों से जुड़ी एक छोटी सी घटना आपके सामने प्रस्तुत करता हूँ।

गोपाल बाबू हमारे ऑफिस की जान थे। उनका पूरा नाम राम गोपाल बाबू था। नाम से ही आप उनके व्यक्तित्व की पहचान कर सकते हैं। सीधे, सरल, सिर पर सफेद और काले बालों का मिश्रण, गोरा मुख, आँखों पर चश्मा, छोटा कद और ढलती उम्र के साथ हमारे ऑफिस के ऑलराउंडर। क्या गुण नहीं थे उनमें ये पूछिए। गुणों की खान थे गोपाल बाबू, हमारे ऑफिस की शान थे गोपाल बाबू। उनके चेहरे पर हर समय हंसी-खुशी साफ झलकती थी मानो वे इस ऑफिस में खुशियाँ ही बॉटने आये हों। ऑफिस में वे बड़े-छोटे सबका हाल पूछते थे। ऐसा कोई भी दिन न हो जो वे आये हों और किसी से बात न की हो। वे ऑफिस में किसी की कोई भी समस्या हो, वे तुरन्त उसके पास पहुँच जाते थे। उनका मानना था कि अगर हम समस्या का समाधान चाहते हैं तो हमें समस्या के पास जाना होगा, तभी हम जल्द से जल्द उसका समाधान ढूँढ पायेंगे। और वे उसका समाधान ढूँढ भी लेते थे।

जाति के ब्राह्मण न होने के बावजूद भी ऑफिस के सारे अनुष्ठान का दायित्व उनके ही कंधों पर होता था। उन्हें पूजा के सारे मंत्र ज्ञात थे। वे खुशी-खुशी उन अनुष्ठानों में हिस्सा लेते थे। उन्हें इसके अलावा बहुत सारी भाषाओं का भी ज्ञान था, जैसे- बंगाली, गुजराती, तमिल, तेलगू और अंग्रेजी। वे ज्यादातर सभी कर्मचारियों से उन्हीं की भाषा में बातचीत करते थे

ताकि उनसे भाईचारा और मैत्री स्थापित कर सके। मैं ऑफिस में नया-नया आया ही था कि मुझे उनके रिटायरमेंट के बारे में पता चला। ऑफिस का एक भी कर्मचारी ऐसा नहीं होगा जिसकी आँखें गीली न हुई हो। सभी लोग उनके रिटायरमेंट से काफी ज्यादा भावुक थे। हमारे निदेशक महोदय ने भी मुख्य प्रशासनिक अधिकारी से इस विषय पर बात की कि क्या उनके रिटायरमेंट की अवधि बढ़ाई नहीं जा सकती। लेकिन अधिकारी ने कहा ये नियम के विरुद्ध होगा। हम कुछ भी नहीं कर सकते। फिर एक दिन आया, जो शायद ऑफिस का कोई भी कर्मचारी नहीं चाहता होगा कि वो दिन आये-गोपालबाबू के रिटायरमेंट का दिन। उनके रिटायरमेंट के उपलक्ष्य में ऑफिस में छोटे से सेमिनार का आयोजन किया गया था ताकि उन्हें उनके अमूल्य योगदान के लिए सम्मानित किया जाए। ऑफिस के

सभी कर्मचारियों ने पहली बार सर की आँखों में आँसू देखे। सबको हँसाने वाले खूद जैसे आज फूट-फूट कर रो रहे हों। उन्हें देखने से ऐसा लग रहा था जैसे उनका कोई अपना उनसे छूट रहा हो। उनके एक-एक शब्द पर तालियों की गड़गड़ाहट पूरे हॉल में गूँज रही थी। उस दिन मैंने रिटायरमेंट को बड़े करीब से देखा और उसके महत्व को भी समझा। सारे कर्मचारियों ने अपने-पैसे से सर के लिए गिफ्ट की व्यवस्था की ताकि हम सबकी यादें उनके दिल में बनी रहे।

उनको देखकर मैंने यही सीखा कि आप किसी भी कार्यालय में कितने दिन कार्य करते हैं और किस पद पर कार्य करते हैं, कितना कार्य करते हैं ये महत्व नहीं रखता। महत्व ये रखता है कि आपने ऑफिस के सदस्यों के साथ कैसा व्यवहार किया ताकि आप उस कार्यालय में रहे या न रहे लोग आपको हर समय अपनी बातों में याद करें। तभी आप एक सफल कर्मचारी बन पाते हैं। गोपालबाबू को देखकर ऐसा ही लगता था कि ऑफिस के एक मामूली से क्लर्क होने के बावजूद हमारे दिल में उनका सम्मान बड़े-बड़े अधिकारियों से काफी ऊँचा था। व्यक्ति केवल अपने वचनों से नहीं बल्कि अपने कर्मों से बड़ा बनता है

- कनि॰ अनुवादक
राजभाषा विभाग
पूमरे, हाजीपुर



धर्म तत्त्व

- सुमन कुमार वर्मा



वास्तव में धर्म का बहुत ही व्यापक अर्थ है- जैसे, किसी व्यक्ति से अपेक्षित एक आदर्श व्यवहार, एक भृत्य से अपेक्षित आदर्श कार्य, बच्चे से अपेक्षित उसके माता-पिता के लिए आदर्श व्यवहार, माता-पिता से अपेक्षित उनके बच्चों के लिए आदर्श व्यवहार, एक न्यायाधीश से अपेक्षित आदर्श न्याय या एक जड़ वस्तु से अपेक्षित उसका आदर्श गुण। यह एक अंतहीन सूची है। यही धर्म, हमें सत्य एवं एकनिष्ठा के पथ पर चलने के लिए न सिर्फ बाँधे रखता है बल्कि उस पथ पर चलने के लिए हमें बाध्य भी करता है। धर्म एक ऐसा तथ्य है जो हमारे सामने उपलब्ध हजारों विकल्पों में से सही और उचित विकल्प पर चलने के लिए हमें बाध्य करता है। तभी तो पुराने काल में न्याय देने वाले अधिकारी को धर्माधिकारी की संज्ञा देते थे।

यहाँ मुझे सेन्गोल की याद आती है। पुराने समय में, जब आज की तरह शासकों को नियंत्रित करने के लिए संविधान नहीं होते थे, तब कैसे एक राजा निरंकुश होने के बावजूद एक कल्याणकारी राज्य के रूप में अपनी शासन व्यवस्था कायम करता था। बड़ा अद्भुत है यह। सोचकर ही मन गर्व और रोमांच से भर जाता है। मेरे सामने छवि आती है- अग्नि प्रज्वलित है। राजा का राज्याभिषेक होना है। राजा, उस प्रज्वलित अग्नि की परिक्रमा करता है और कहता है- 'मैं तो राजा हूँ। सारी शक्तियाँ मेरे पास हैं। मुझे कौन दंड दे सकता है। तभी पुरोहित पीछे से एक छड़ी से उसे मारता है और कहता है- यह धर्म का दंड है, राजन। तुम अपने धर्म से विचलित होओगे तो यह, 'धर्म दंड', तुम्हें दण्डित करेगा।' राजा अग्नि की तीन परिक्रमा पूरी करता है। पुरोहित तीन बार उसे धर्म दंड से मारता है और अंत में उस 'धर्म दंड' रूपी छड़ी यानी सेंगोल को राज दरबार में उसके सामने ऐसी जगह पर स्थापित कर देता है कि राजा जब भी अपने दरबार में बैठकर कोई निर्णय दे, तो 'धर्म दंड' उसके सामने रहे। क्या अद्भुत विचार है,

एक राजा को सत्यनिष्ठ बनाने का।

धर्म से विचलित होने के कारण, हम उलझन में हैं। एक और बहुत ही छोटी कहानी से, धर्म क्या है, यह बिल्कुल ही स्पष्ट हो जाएगा। एक ऋषि किसी तालाब में स्नान कर रहे थे। तभी उनको एक बिच्छू दिखाई दिया जो पानी की तेज धारा के कारण डूब रहा था। ऋषि ने उसको अपनी हथेलियों पर रखकर निकालने की कोशिश की, तो उसने उनको डंक मार दिया। यह क्रम कई बार चला। अंत में कई प्रयासों के बाद ऋषि उसे निकालने में सफल रहे। एक लड़का दूर से उन्हें देख रहा था, उसने कौतुहल-वश उनसे पूछ लिया- 'श्रीमान् जब यह बिच्छू बार-बार आपको डंक मार रहा था तो फिर आपने उसे छोड़ क्यों नहीं दिया?' ऋषि ने कहा- 'डंक मारना बिच्छू का धर्म है और सेवा करना मानव का धर्म है। हम दोनों ने अपने-अपने धर्म का पालन किया।'।

स्पष्ट है, हम अपने धर्म से अनभिज्ञ हैं तभी तो ऐसी स्थिति आ गई है। पश्चिम के वे विद्वान भी क्या करें, वे ऐसे शब्दों के अंग्रेजी पर्यायवाची खोजने का प्रयास करते हैं, जिनका समानार्थी शब्द अंग्रेजी में है ही नहीं जैसे धर्म, नीति या ऋत।।

जैसे-जैसे किसी देश का औद्योगीकरण होता है उनकी प्रशासनिक व्यवस्था जटिल होती जाती है। ऐसी व्यवस्था में सही एवं गलत निर्णय के बीच बहुत ही महीन रेखा होती है। इस स्थिति में कितना भी अत्याधुनिक नियमों की किताब क्यों न हो वह सही निर्णय लेने में सहायक नहीं हो सकता। यहाँ धर्म की भूमिका सामने आती है जो सही निर्णय लेने में हमारी सहायता कर सकती है।

मैं मन ही मन ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि, हे ईश्वर थोड़ा-थोड़ा धर्म तत्व हम सभी में देना ताकि हम सब सत्य के मार्ग पर चल सकें।

- मुख्य कार्यालय अधीक्षक/
वाणिज्य विभाग, पूमरे, हाजीपुर

रईसों की पहचान उनके कुत्तों से होती है

- ललन चतुर्वेदी (ललन कुमार चौबे)



प्यारेलाल जी अपने ड्रेस डेकोरम के प्रति बहुत संजीदा हैं। अलग-अलग समय के अलग-अलग कपड़े। हम आम आदमी इस तरह के शौक या लफड़े में नहीं पड़ते। खैर, पसंद अपनी अपनी, ख्याल अपना-अपना। आदतन एक सुबह जब सैर पर निकला, प्यारेलाल जी टकरा गए। मेरी नजर चेहरे से पहले उनके जूते पर चली गई। और जाती भी क्यों नहीं? उनकी खासियत यह है कि वह बड़े चमकदार जूते पहनते हैं। मैं थोड़ी देर ठिठक कर उनके जूते का मुआइना करता रहा। उनसे जब रहा नहीं गया तो भड़क उठे 'सुबह-सुबह इस तरह क्या देख रहे हो? हाल-चाल दुआ-सलाम का न्यूनतम शिष्टाचार भी भूल गए? जरा सिर उठाकर नजरें तो मिलाओ।' मैंने खेद व्यक्त करते हुए कहा- 'प्यारे भाई! दरअसल आपके जूते इतने चमकदार होते हैं कि आदमी की नजरें ही नहीं हटतीं। आदमी चाहे तो अपना मुंह भी उसी में देख ले।' प्यारेलाल जी अपने जूते की इतनी तारीफ से फूले नहीं समा रहे थे। उन्होंने अपना जूता आख्यान शुरू किया 'किसी चीज की इज्जत करना सीखो। कुल और कपड़ा जोगाने (सावधानीपूर्वक सुरक्षित रखने) से बचते हैं। तुम विश्वास नहीं करोगे मेरे जूते सतरह साल पुराने हैं।' उनकी यह बात सुनकर तो मेरा मुंह खुला का खुला रह गया। मैंने कहा- 'प्यारे भाई! सतरह साल की उम्र में आपके जूते कोमल किशोर की तरह दिख रहे हैं।

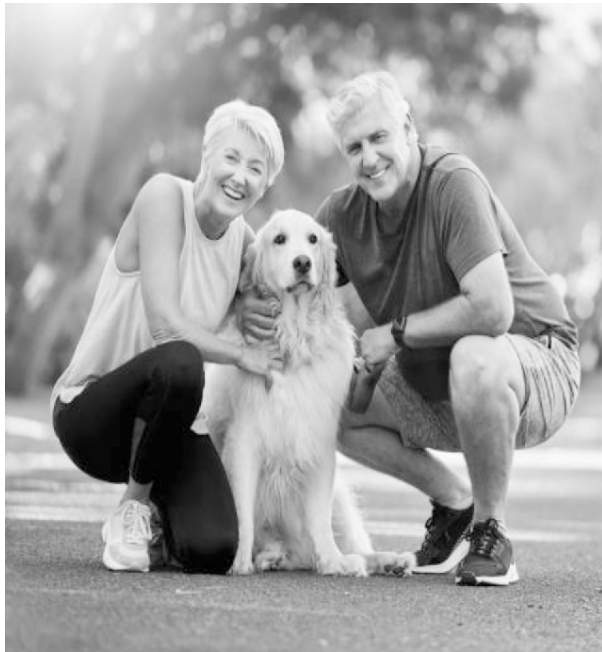
आखिर इसका राज क्या है?'

'सुबह उठकर प्रतिदिन पॉलिश करता हूं। इसे विटामिन डी की आपूर्ति करने के लिए कायदे से सूर्य-स्नान भी कराता हूं।' 'जूते की इतनी हिफाजत!'- इस वाक्य को सुनने के बाद प्यारेलाल जी ने बड़े गर्व से कहा- 'जानते हो रईसों की पहचान उनके जूतों से होती है।'

मैंने विनम्रता पूर्वक कहा - 'प्यारे भाई। वह पुराना फिल्मी संवाद अब मत दोहराइए। जमाना बहुत एडवांस हो गया है। अब रईसों की पहचान उनके कुत्तों से होती है।' प्यारेलाल जी मेरी नई स्थापना से चौंक उठे। मैंने उन्हें सचेत किया- 'अभी आप कुत्ते की कीमत नहीं जानते। देखिए, सामने से जो मैडम गोलडी को लेकर टहला रही हैं वह विदेशी नस्ल का है और उसकी कीमत हजारों रुपये नहीं हजारों डालर है। यह आयातित है। मैडम जब उसके साथ चलती हैं तो कुत्ते के कारण उनका भी रुतबा थोड़ा बढ़ जाता है। लगता है कि रैंप पर चल रही हैं। खैर, उनकी बात छोड़िए। उनका अपना नसीब है। साधारण आदमी अब भी देसी नस्ल पर ही संतोष किए बैठा है। मगर जो बड़ा रईस है वह देसी को कब का बाहर का रास्ता दिखा चुका है। जो जितना बड़ा रईस है उसका कुता भी उतना ही रईस और कीमती है। और आयातित कुत्तों की आमद से उनकी रईसी में जो इजाफा हुआ है उसके बारे में बताना शुरू करूंगा तो आपकी आंखें खुली रह जाएंगी। शेयर बाजार में जैसे

उछाल आता है, कुत्ते के आने के कारण उनके जीवन में ऐसा ही कुछ उत्साह और उछाल आया है। दुआ है कि सबके दिन वैसे ही फिरे। यकीन मानिए जो सचमुच रईस माने जाते हैं और जिनको ध्यान में रखकर कहा जाता है कि समय कीमती है, वे इन्सानों से कहीं अधिक अपना समय अपने कुत्तों को देते हैं। आखिर कुछ तो कारण है।' प्यारेलाल जी को मेरी बातों से थोड़ा झटका लगा। थोड़ी देर के बाद संयत हुए और अफसोस व्यक्त करते हुए कहा- 'सब समय की बात है। आज के जमाने में आश्चर्यजनक रूप से कुत्तों की कीमत और इज्जत बढ़ गई है। ऐसा कभी सोचा नहीं था। आदमी अब कुत्तों के बलबूते अपनी रईसी झाड़ने लगा है। जिसके पास जितने कुत्ते वह उतना ही बड़ा रईस।'

मैंने मुस्कुराते हुए कहा 'अब भी मेरी बातों पर विश्वास नहीं है तो इसके सत्यापन के लिए गूगल पर ऑनलाइन रिव्यू पढ़ने के लिए नहीं कहूँगा। आंखोदेखा सबूत चाहिए तो कभी डॉक्टर शर्मा के पास जाइए।



घंटों मरीज लाइन में धूप तापते रहते हैं और वह कुत्ते को गार्डन में टहलाते रहते हैं। पूरे प्रांत के लोग उनका बाट जोहते रहते हैं और वह कुत्ते से खेलते रहते हैं। शायद कुत्ते से अपनी टेंसन-थेरेपी करते हैं। रात में दो बजे तक मरीज देखते हैं। अब बोलिए कुत्ते इंसान से अधिक महत्वपूर्ण हैं कि नहीं? सो अपने दकियानूसी विचारों से छुटकारा पाइए और जूते में अपनी शक्ल देखकर खुश होने के बजाय घर में कोई विदेशी मेहमान लाइए। घर की रौनक बढ़ाइए। अपनी रईसी के ओल्ड मॉडल अर्थात् इस सतरह वर्षीय जूते को अलविदा कह ब्रांडेड स्पोर्ट शू पहन कर अपने प्यारे विदेशी मेहमान के साथ सुबह की सैर को खुशगवार बनाइये। प्यारेलाल जी की आंखें चमक उठीं- 'तुमने गजब का आइडिया दिया। मैं जल्द ही चंचला के बर्थ डे पर सरप्राइज गिफ्ट दूंगा-सबसे कीमती तोहफा मेरे पास क्या नहीं है एक आयातित कुत्ते के सिवा। अब देखेंगे हमारे मोहल्ले के लोग।' मैं कहना चाह रहा था 'ये हुई न बात।' मगर प्यारेलाल जी के पैरों में पंख लग गए थे। एक अदद कुत्ते की कमी को वह गंभीरता पूर्वक महसूस कर रहे थे।

202, असीमलता अपार्टमेंट
मानसरोवर एन्क्लेव, हटिया
रांची-834003
मोबाइल नं.-9431582801



चार गज़लें

- डॉ. कविता विकास

(एक)

हमारे दिन अगर बेहतर से बेहतर आ भी जाएँ तो
जुड़े रहना है धरती से, शिखर पर आ भी जाएँ तो
इन्हीं के बीच से रस्ते हमें आगे बनाने हैं।
बड़े-छोटे जो बाधाओं के भूधर आ भी जाएँ तो
यही चाहत है बच्चों को सदा खिलता हुआ देखें
चमन में गम के दर्दिले बवंडर आ भी जाएँ तो
सलीके से बहा देना, इन्हें पलकों की कोरों से
सताने के लिए यादों के लश्कर आ भी जाएँ तो
हमेशा ही बँधे रहने हैं चौखट से हमारे पाँव
कमाने को भले ही घर से बाहर आ भी जाएँ तो
खुली आँखें रहें मन की, तभी मिलते हैं ईश्वर भी
नहीं तो ढूँढ़ते रहना वे घर पर आ भी जाएँ तो
अगर ठाना है जीतेंगे, तो जीतेंगे ही जीतेंगे
हजारों ही मुकद्दर के सिकंदर आ भी जाएँ तो।

(दो)

शबे विसाल की यादें, बहार का मौसम
बढ़ा रहा है तपन इंतजार का मौसम
हैं बेकरार इधर हम, वो बेकरार उधर
कभी तो पास भी आए करार का मौसम
बुलंदियों पे भला कब ये वक्त ठहरा है
न जाने कब चला आए उतार का मौसम
अगर सुकून से बितानी है जिंदगी तुमको
तो आसपास न रहने दो रार का मौसम
निराश हो रहे बच्चों के वास्ते या रब
घटा न देना कभी रोजगार का मौसम
मुझे बचा ले हताशा से ऐ मेरे मौला
कि हौसलों से ही जाता है हार का मौसम
सजा मिली हमें 'कविता' अना बचाने की
तमाम उम्र जिया, इतिशार का मौसम

(तीन)

किसी का जीवन सुधार दोगे, किसी को खुशियाँ अपार दोगे
तो कितनी ही जिंदगानियाँ तुम इसी जमाने में तार दोगे
मुसीबतों का है जो भी मारा, उसे अगर ऐतबार दोगे
तुम्हें वो अपना खुदा कहेगा, जिसे मुहब्बत का हार दोगे
वो त्याग सबसे अमोल है जो, वतन की रक्षा को है समर्पित
जुबां पे सबकी चढ़े रहोगे, वतन पे गर जां निसार दोगे
जवां रहे जीने की तमन्ना, भले ही हो चार दिन का जीवन
नहीं तो जीकर भी क्या करोगे, अगर उमीदें ही मार दोगे
न कूप मंडूक बन के रहना, न खिड़कियाँ मन की बंद रखना
नयी हवाएँ न आ सकेंगी तो घुट के जीवन गुजार दोगे
गँवा के रातों की नींद अपनी, तलाश करनी है तुमको मंजिल
यकीं नहीं बस डिगे तुम्हारा, फलक से तारे उतार दोगे
नहीं मुनासिब है जिंदगी भर, किसी की यादों में खोए रहना
नया करोगे तभी तो मन से, अतीत जब तुम बिसार दोगे

(चार)

लोग सचमुच होते हैं जो काम के
रह गए हैं वो यहाँ अब नाम के
लौटने का दे रहे संदेश हैं
लाल-पीले रंग चढ़ती शाम के
खास के तो महकमे ही खास हैं
बात हित में करनी होगी आम के
ठोकरो से भी नहीं गिरते हैं वो
चलते हैं इक-दूजे को जो थाम के
नौजवानों को है उससे सीखना
जिसने छोड़े नक्श अपने गाम के
बात उसमे कुछ तो है सबसे जुदा
आगे-आगे जो है चलता लाम के
दुख से 'कविता' चाहिए गर मुक्ति तो
तुम भी चरणों में शरण लो राम के

फ्लैट -टी/1801

सेक्टर - 121, नोयडा

● उ० प्र०, पिन- 201301

धरती पर के मौसम

- महेश कुमार केशरी

मौसम और ऋतुओं के चक्र
को मैं नहीं मानता...
ये सब बेमानी बातें हैं
मैं नहीं मानता किसी आवृत्ति को
समय के चक्र या दुहराव
को मैं नहीं मानता
और ना ही मैं मानता हूँ
मौसम वैज्ञानिकों की भविष्यवाणियाँ....

मुझे ये
सब बेकार की
बातें लगती है...।
मेरा मानना है कि
धरती पर के सारे मौसम
स्त्री
से जुड़े हैं...

जब वो हँसती है
तो वसंत आता है
वातावरण में एक मादकता
सी छा जाती है...
फूलने लगते हैं फूल
गालों पर छाने लगती है
मुस्कान...
और

हर तरफ केवल खुशियाँ ...
ही खुशियाँ दिखाई देने लगती है
सचमुच जब स्त्री हँसती है
तो वसंत आ जाता है।

स्त्री जब उदास और
बहुत दुःखी होती है तो
पतझड़ आ जाता है...।
पेड़ भी स्त्री के दुःख से
उदास हो जाता है ।
तो गलने लगता है
स्त्री के दुःख में..
और उसकी शाखाओं से पते गायब हो जाते हैं...
मानों कि वे स्त्री के उदासी से दुःखी हों ..

स्त्री ...
जब ठठाकर हँसती है
तो, वैसाखी आती है...
घर आँगन अन्न से भर
जाता है...
चारों और मंगल गान बजने
लगते हैं....
और लोग मनाने लगते हैं
लोहड़ी का त्योहार

स्त्री जब रोती है
तो सैलाब आ जाता है...
बाढ़.. बीमारी..
प्राकृतिक आपदायें...
स्त्री के रोने से ही आती हैं...
इसलिये दुनिया को अगर
बचाना है आपदाओं-विपदाओं
से तो स्त्री को हमेशा खुश रखो...!

अब लगता है कि ये पूरी दुनिया खारे पानी में डूब जाएगी

- महेश कुमार केशरी

सुना है, धरती पर तीन
चौथाई खारा पानी है.. और
समुंदर का जलस्तर भी लगातार
बढ़ रहा है..
धीरे धीरे हमारे तटीय क्षेत्र गायब होते
जा रहे हैं..
एक समय के बाद बंबई बिला जायेगा..
आदमी ने कभी नहीं सोचा कि
इस धरती पर जो तीन चौथाई खारा पानी... है... वो
आखिरकार क्यों है..?
क्यों मीठे पानी के
स्रोते सूखते जा रहे हैं...?
क्यों... सूखती जा रही है
बूढ़ी गंडक और यमुना..
क्यों सूखती जा रही है...
हमारी संवेदनाएँ स्त्रियों को लेकर ...
सभ्यता के शुरुआती दिनों से ही
स्त्रियाँ लगातार रोए जा रही हैं..।
इनके रोने से ही ये समुंदर बने हैं...!
उनके रोने से ही मीठे जल के स्रोते सूखते जा रहे हैं...
और इन स्त्रियों के
लगातार रोने से ही हमारे समुद्र लगातार

बढ़ रहे हैं...
सुना है, ये जो खारा पानी है... वो
स्त्रियों का दुःख है.....
जो पृथ्वी पर तीन चौथाई
समुंदर के तौर पर पड़ा है...
स्त्री दुःखों को पी जाती है....
बहुत बुरे वक्त में जो कि बहुत जल्द
ही आदमी का आयेगा
तब शायद
खारे पानी की तरह ये तीन
चौथाई दुःख भी पी जाती हमारी स्त्री ...।
लेकिन अब लगता है कि ये पूरी दुनिया
एक दिन साबुत खारे पानी में डूब जायेगी
क्योंकि आजकल एक नयी कवायद
चल पड़ी है....
स्त्री को हिस्सों में काटकर फ्रिज
में रखने की कवायद.....
फिर... दुःखों को पीने वाली स्त्री
इस धरती पर कहाँ बचेगी ?
जो सोचेगी.. हमारे संकट या अस्तित्व के बारे में...!
उस समय ये जो धरती का तीन चौथाई दुःख है
उसको कौन पियेगा ?
नीलकण्ठ की तरह ...।

- मेघदूत मार्केट, फुसरो
बोकारो, झारखंड - 829144

कविता

यूँ हसते हसते आ गए हम भी
जाने क्यों हाथ उन्होंने मेरा छोड़ दिया ।
मुस्कुराता हूँ मैं शायद अब अंदर से
लोग कहते हैं कि यूँ मुस्कुराना छोड़ दिया ।
तुमसे मिलने की जो तमन्ना थी मुझे कभी
उसने अब दिल में आना जाना छोड़ दिया ।
वो तुम्हारा मिलना, बातें करना और खिसक जाना हालात
ने सब सिलसिला तोड़ दिया ।
रफ़ता रफ़ता सब्र आ गया है उनको भी
अब आँसूओं ने छलकना छोड़ दिया ।

एहसास

- एम.पी. बर्नी

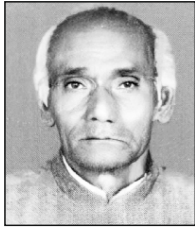
जुल्म करना था तो किसी अमीर पे करते
बेकार में क्यों किसी गरीब का दिल तोड़ दिया ।
मैं खूब समझता हूँ कि रंजिश है मुझसे
बस सबको दिखाने के लिए गिला छोड़ दिया ।
एक वर्क सी दौड़ी है बदन में मेरे
ऐसा लगता है उसने चुपके से मेरा हाथ नोच लिया ।
एक नशा सा तारी रहता है अब मुझ पर
जानें यूँ साथ उन्होंने हमारा छोड़ दिया ।

- मुख्य सामग्री प्रबंधक
पूमरे, हाजीपुर
मोबाईल नं. 9771425754

दो कविताएँ

- दुखित महतो भक्तराज

देश हमारा भारत प्यारा



देश हमारा भारत प्यारा
सब देशों से न्यारा है,
शस्य श्यामला धरती इसकी
यह आंखों का तारा है।
हिमगिरी की ऊँची चोटी से
गंगा-सी बहती नदियां
सींचती है भारत भूमि को
देती हैं हमको खुशियां।

लाँघ वनों को आती नीचे
जहां सिंधु का किनारा है।

उदय हुआ था प्रजातंत्र था
बिहार के वैशाली में,
इसको देख संविधान बना
खुद की ही रखवाली में।

अधिकार दिया है जीने का
यही भीम का नारा है।

धूमिल हो रहा लोकतंत्र
नेताओं की कुचाल से,
परिवारवाद के चक्कर में
खुशबू गई है भाल से

उपेक्षित हो रहे हैं बच्चे
कोई नहीं सहारा है।

भ्रष्टाचार के कीचड़ में
सना गए हैं सब नेता
फुर्सत नहीं है तिकरमों से
कैसे आएगा त्रेता।

जो सताता दीन-दुखियों को
फिरता मारा-मारा है
शस्य-श्यामला धरती इसकी
यह आंखों का तारा है।

भारत की तस्वीर

भारत की तस्वीर
कमल फूल सी खिली हुई है
भारत की तस्वीर,
जन्म लिए यहीं महामानव
कृष्ण और रघुवीर।

उत्तर का गिरिराज हिमालय
भारत का है भाल,
दक्षिण में चरणों को धोता
हिंदसागर विशाल।

वक्षस्थल विंध्याचल पर्वत
हम सबकी तकदीर।

वनों से आच्छादित भारत
वन्य प्रांत कहाता,
साधना का यह पुण्य स्थल है
संतों का विधाता।

राम ने जब मारा दनुज को
सबका बना नजीर।

सनातन धर्मावलंबी है
सत्य-अहिंसा संबल,
कोई भी यदि आंख बताता
आती याद चंबल।

कर्म ही शक्ति, जप-तप-पूजा।
कर ले शुद्ध शरीर।

देव-देवीमय भारतभूमि
धन्य-धन्य हैं लोग
भक्ति भावना उमड़ रही है
यह अच्छा संयोग।

देश-प्रेम के गीत सुनाते
तुलसी, सूर, कबीर,
जन्म लिए यहीं महामानव
कृष्ण और रघुवीर।

ग्रा.+पो.-धर्मपुर बांटे
भाया- पटोरी
जिला- समस्तीपुर (बिहार)

उसपार-इसपार

- प्रिंस कुमार



तब भी खुशियों की कमी न थी,
न अब ही खुशियाँ, मंद हैं।
उसपार अलग आनंद था,
इसपार अलग आनंद है॥

उसपार था माता का आँचल,
अब भार्या की सौंधी गंध नहीं।
उसपार पिता का साया था,
अब ऊपर गगन अनंत है॥

उसपार थे खेल लड़कपन के,
इसपार अकेला अब भी नहीं।
तब दर्शक मेरे साथी थे,
अब देवदूतों का मंच है॥

उस पार थी अपनों की दुनिया,
इसपार भी अपने ही तो हैं।
लगता है इन अनजानों से,
पहले का मधुर संबंध है।

तब पुत्र था अपने मात-पिता का,
अब ईष्ट, मित्र न साथी है।
तब पिता पति और भाई थे,
अब रिश्तों का न बंध है॥

उसपार थी दुनिया सपनों की
सपनों में सफलता की आशा
अब अपने हैं न सपने हैं
और न दोनों के फंद हैं

उसपार थे पुत्र और पुत्री के,
उत्तर से परे वे जटिल प्रश्न।
इसपार हमारी दुनिया में,
सबकुछ सहज स्वच्छंद है॥

अतः मेरे जाने का प्रिय,
तुम लेश-मात्र न शोक करो।
उसपार हम जैसे समृद्ध थे
इसपार भी हम सम्पन्न हैं॥

वरि० अनुवादक
पूमेरे, डी.डी.यू.

मोहब्बत का मुकाम

- प्रियदर्शी अजय



पंछी भी बिना पता के,
पहुँच जाते हैं मंजिल तक।
नफरती इन्सान कभी भी,
पहुँचता नहीं दिली मुकाम तक॥
नफरतों की चोट से जब टूटे,

हृदय-रूपी कोमल सड़क।
तब प्यार -रूपी पत्थर से ही,
पाटना दिल की गली तक।
गूँजता जिसके जिगर में,
प्यार का गीत हर सांस तक।
कभी देखा नहीं उससे बड़ा,
दिलदार कोई आज तक ॥

(2)
अधिकारों के लिए चुप्पी,
कभी औचित्य नहीं है।
दब्बू हो कर बना बुत -सा,
वह पौरुष कभी नहीं है॥
चुप्पी साधे कुरुक्षेत्र में,
पाण्डव कहाँ रहा था ?
दुर्योधन के ताने-बाने,
महाबली कहाँ सहा था?
कमजोरों की चुप्पी देख,
दुराचारी दम्भ भरा है।
कायरों की तांडव लीला,
शाश्वत नहीं रहा है ।
बिना मांगे मां का दूध,
शिशु को कहाँ मिला है।
अपने हक को लुटते देख,
पशु भी नहीं सहा है ॥

- उच्च विद्यालय
ढोढ़ाई पिपरा, पूर्णिया

कविताएँ

कहूँ तो किसे कहूँ?

- रवीन्द्र कुमार 'रतन'



मैं अपने मूक हृदय की व्यथा कहूँ
तो किसे कहूँ
मैं अपने बीते दिवसों की कथा कहूँ
तो किसे कहूँ?

जीवन के प्रथम प्रहर में ही
स्वामी से हुए इतने दूर।
कि धुल गया उसके जीवन की
पहचान का ही शुभ सिन्दूर।
मैं अपने दारुण दुःख-जीवनी कहूँ
तो किसे कहूँ?
मैं अपने बीते दिवसों की कथा कहूँ
तो किसे कहूँ?
दिव्य-ज्ञान होने के पहले
प्राण-दीप तो बुझ जाता है।
हर पल हर क्षण स्मरण इन्हीं का
बार-बार मुझको आता है।
मैं अपने जीवन की अव्यवस्था कहूँ
तो किसे कहूँ?
अपने बीते दिवसों की कथा कहूँ
तो किसे कहूँ?
सर्वस्व मेरा देश-हित ही
न्योछावर हो कर रह गए।
अरमाँ हमारे दिलों के
आँसुओं में ही धुल गए।
मैं अपने मर्माहत मन की गाथा कहूँ
तो किसे कहूँ?
मैं अपने बीते दिवसों की कथा कहूँ
तो किसे कहूँ?
विधवा जीवन ही जीना था,
माँ तो बन जाने देते तुम।
एक सहारा ही दे करके,
जो लेना था ले लेते तुम।
मैं निज सामाजिक जीवन की प्रथा कहूँ
तो किसे कहूँ?
अपने बीते दिवसों की कथा कहूँ
तो किसे कहूँ?

सेनानी सदन, H.N- 03
सुभाष नगर, हाजीपुर

आजादी का अमृतकाल

- जुही बालाकर्ण



कुछ झलक बंदिशें, बेबसी और लाचारी की
जरा गौर करें हम हैं अमृत काल में आजादी के
पहली बंदिश तब लगी
जब वसन में लाडो के नवजीवन
नव सृजन का रंग लाल लगा

कहा गया सबसे अच्छे दोस्त पापा को
मुश्किल भरे नव अनुभव की भनक न लगे
इस बात की तू गांठ लगा
एक बेबसी तब दिखी
जब दुष्कर्म पीड़िता बिलखती रही
बैठे किसी एक कोने में
किसी मासूम को शिकार बनाया
फिर किसी सिरफिरे ने
मैं कहती हूँ
जब न्याय दिलाने की
हिम्मत ही नहीं बहती तुम्हारे रंगों में
तो किसने कहा
तुम्हारी झूठी शान खानदानी
रखने उसके अंगों में
सीना चौड़ा होता है पापा का
बिटिया बड़े-बड़े मंचों पर
महिला उत्थान कार्यक्रम चला रही है
पर कभी न पूछा पापा ने
बिटिया तू किस परेशानी
का दर्द छुपा रही है
हवस के भूखे दरिंदे नहीं देखते
उम्र लिंग और नर-नार
फिर एक नवयुवक को दरिंदों ने
बनाया अपना शिकार
इनमें दिखती हैं कुछ
झलक बंदिश, बेबसी और लाचारी की
नैतिक शिक्षा ही बन सकती है
इलाज ऐसी मानसिक बीमारी के
जरा गौर करें हम हैं
अमृत काल में आजादी के।

- कनि. ले. सहा./लेखा
पूमरे हाजीपुर, मो.-9572623983

पूर्व मध्य रेल की गतिविधियाँ



पूर्व मध्य रेल की गतिविधियाँ



पूर्व मध्य रेल की गतिविधियाँ



पूर्व मध्य रेल की गतिविधियाँ

